मेरे काबुल में बिताए वर्ष -
1990-1992

विजय के नाम्बियार

प्रथम प्रकाशन 2018

प्रतिलिप्याधिकार © विश्व मामलों की भारतीय परिषद

आईएसबीएन: **978-93-83445-37-0**

सभी अधिकार सुरक्षित हैं। इस प्रकाशन का कोई भी भाग कॉपीराइट स्वामी की लिखित अनुमति प्राप्त किए बिना, उद्धृत, पुनर्प्राप्ति प्रणाली में संग्रहित या किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम, इलेक्ट्रॉनिक, मैकेनिकल, फोटोकॉपी रिकॉर्डिंग से या अन्यथा प्रसारित नहीं किया जा सकता है।

इस प्रकाशन में तथ्यों और विचारों की जिम्मेदारी विशेष रूप से लेखक की है और उसकी व्याख्या, विश्व मामलों की भारतीय परिषद, नई दिल्ली के विचारों को प्रतिबिंबित नहीं करती है।

विश्व मामलों की भारतीय परिषद
सप्रू हाउस, बाराखंभा रोड
नई दिल्ली -110 001, भारत
दूरभाष। : + 91-11-23317241-42, फैक्स: + 91-11-23322710
www.icwa.in

विषय वस्तु

.....

पृष्ठभूमि

काबुल आगमन

बढ़ता दबाव

मिशन और राजनयिक परिवेश

1991 की प्रतिकूल परिस्थितियां

अप्रैल नियति और अस्त-व्यस्तता का माहौल

उपसंहार

मेरे काबुल में बिताए वर्ष - 1990-1992

विजय के नाम्बियार[1]

एक प्रसिद्ध कहावत में, एलामा इकबाल ने अफगानिस्तान का वर्णन एक ऐसे शरीर के "हृदय" के रूप में किया है जो "धूल और पानी" से मिलकर बना है जिसमें एशिया शामिल है। उन्होंने कहा है कि एशिया समृद्ध बनेगा या फिर सड़-गल जाएगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसके "हृदय" का किस प्रकार उपचार किया गया है, उसका किसी प्रकार ध्यान रखा गया है। आज हम एक परस्पर जुड़े विश्व में रह रहे हैं, जो भौगोलिक सीमाओं को लांघ चुका है। परंतु पिछले चार दशकों में, एशिया और विश्व को एक बड़ी कीमत चुकानी पड़ी है क्योंकि "हृदय" रोगग्रस्त हो रहा है। यदि भविष्य में इस मार्ग से विचारों, ऊर्जा, संयोजनता और सभ्यात्मक स्थायित्व के स्वतंत्र प्रवाह को प्रारंभ किया जाता है, तो ऐसा एक पुनर्गठित और स्वस्थ अफगानिस्तान के माध्यम से ही किया जाना चाहिए।

अगस्त, 1990 तक, मैं लगभग दो वर्ष विदेश मंत्रालय के पूर्व एशिया प्रभाग में बिता चुका था जिसके दौरान मैंने प्रधानमंत्री राजीव गांधी की दिसम्बर, 1988 में चीन की ऐतिहासिक यात्रा से प्रारंभ करते हुए इस प्रभाग का कार्यभार संचालित किया था। मुझे यही कारण बताया गया था कि क्यों विदेश सचिव केपीएस मेनन जूनियर ने मुझे अल्जीरिया से मुख्यालय लौटने के लिए कहा था जहां मैं 1985 के अंतिम भाग से कार्य कर रहा था। राजीव गांधी की चीन यात्रा अत्यंत ऐतिहासिक थी और हालांकि उस यात्रा से प्राप्त किए गए समस्त परिणामों को सार्वजनिक नहीं किया गया था, फिर भी इस यात्रा ने लगभग एक-तिहाई से अधिक शताब्दी से व्याप्त गहन संदेह और अविश्वास के पश्चात् हमारे संबंधों के आधारभूत स्वरूप में परिवर्तन करने में सहायता दी थी। हालांकि चीनी प्रीमियर ली पेंग की वापसी यात्रा 1990 के अंतिम माहों में निर्धारित थी, परंतु मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ जब विदेश मंत्री मुचकुंद दुबे ने मुझे अगस्त-मध्य में संकेत दिया कि वे मेरे लिए एक नई तैनाती पर विचार कर रहे हैं। मुझे इस बात पर आश्चर्य हुआ कि उन्होंने यह निश्चय कर लिया था कि वे काबुल में राजदूत हामिद अंसारी का स्थान लेने के लिए मेरे नाम पर विचार करेंगे। सत्तर के दशक के मध्य में, वाणिज्य मंत्रालय में मेरी तैनाती के दौरान मैंने अफगान व्यापार संबंधी मामलों को देखा था। मैं राजदूत बृजेश मिश्रा के अधीन 1981 में न्यूयार्क में कार्य करते हुए भी अफगानिस्तान के बहुपक्षीय आयामों से परिचित था जब इंदिरा गांधी की गई सरकार ने अफगानिस्तान पर सोवियत हमले की निंदा करने के लिए महासभा में लाए गए संकल्प के पक्ष में मतदान करने से इंकार कर दिया था। मैंने अत्यंत विभाजक मुद्दे पर यूएनजीए और एलएएम मंचों पर हमारे शिष्टमंडल के लिए उनके द्वारा दिए जाने वाले वक्तव्यों का नेमी तौर पर मसौदा तैयार किया था। परंतु उप-महाद्वीप के उस भाग में विद्यमान जमीनी हकीकतों की जटिलताओं और

---

[1] विजय के. नाम्बियार अक्तूबर, 1990 में काबुल में तैनात किए गए थे। उन्होंने अलजीयर्स, क्वालालम्पुर, बीजिंग और इस्लामाबाद में भारत के राजदूत तथा न्यूयार्क में पीआर के रूप में भी सेवा की है। वे संयुक्त राष्ट्र में अवर महासचिव तथा म्यांमार में महासचिव के विशेष सलाहकार भी रहे हैं।

विशेषताओं के संबंध में मेरा प्रत्यक्षत: अनुभव नहीं था। मैंने केवल एक ही बार निदेशक अमरनाथ वर्मा के नेतृत्वं में वाणिज्य मंत्रालय के व्यापार मिशन के प्रतिनिधि के रूप में 1975 में काबुल का दौरा किया था।

मेरे प्रस्थान से पूर्व, मंत्रालय में मुझे नेमी जानकारियां प्रदान की गई तथा प्रधानमंत्री कार्यालय में संयुक्त सचिव रोनेनसेन के साथ व्यक्तिगत तौर पर बातचीत हुई। प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह के साथ मेरी बैठक औपचारिक ही थी तथा इससे मुझे कुछ ही मार्गदर्शन अथवा रणनीतिक निर्देश प्राप्त हो सके। उस समय, भारत के भीतर विद्यान अधिकांश राजनीतिक दाव-पेचों का प्रयोग देश में व्याप्त घरेलू दबावों का निवारण करने के लिए ही किया जाता। अपने महत्व के बावजूद, अफगानिस्तान ने सरकार के उच्च स्तरों के भीतर अत्यंत कम ध्यान आकर्षित किया था। पीएमओ में अभी जगह ओबीसी अथवा 'अन्य पिछड़े वर्गों' के आरक्षण के लिए मांगों तथा सरकारी नौकरियां और शैक्षणिक संस्थाओं में स्थान प्रदान करने के संबंध में सकारात्मक कार्यवाही करने पर ही ध्यान दिया जा रहा था। मंडल आयोग की सिफारिशों को स्वीकार करने के प्रधानमंत्री के निर्णय से दिल्ली की सड़कों पर प्रमुख जन-आंदोलन भड़क गया तथा छात्रों और अगड़े वर्गों के लोगों ने आंदोलन प्रारंभ कर दिया जिससे राजधानी और समूचे उत्तर भारत में कानून और व्यवस्था की स्थिति अत्यंत नाजुक हो गई। जम्मू और कश्मीर में रूबिया के अपहरण के उपरांत फैलने वाले उग्रवाद ने शासक गठबंधन के भीतर व्याप्त कमजोरियों को उजागर किया और घाटी में और अधिक कड़ा सरकार-विरोधी आंदोलन प्रारंभ हो गया। सरकारी संस्थाओं पर निरंतर हमले होने लगे तथा सुरक्षा बलों के लिए इस उग्र आंदोलन के स्वरूप से निपटना निरंतर कठिन होता चला गया। पूर्वोत्तर में व्याप्त असंतोष भी अधिक गहन होता जा रहा था। अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में, सद्दाम हुसैन की सेनाएं कुवैत तक पहुंच गई थीं और खाड़ी युद्ध प्रारंभ होने से विदेश मंत्रालय के लिए चुनौती काफी गुना बढ़ गई कि कुवैत और इराक में कार्यरत लगभग दो मिलियन ऐसे भारतीय कर्मकारों की सुरक्षित और संरक्षित वापसी किस प्रकार सुनिश्चित की जाए जो प्रत्यावर्तन और प्रतिपूर्ति की मांग कर रहे थे। इन विविधतापूर्ण परिस्थितियों में, इसमें कोई आश्चर्य नहीं था कि निरंतर क्षीण होती जा रही वी.पी. सिंह की सरकार अफगानिस्तान पर अधिक ध्यान दे पाने में असमर्थ थी। इसके पतन के पश्चात्, अंतरिम चन्द्रशेखर सरकार भी इस स्थिति में अधिक परिवर्तन न ला सकी।

पृष्ठभूमि

हालांकि अफगानिस्तान से सोवियत सेना की वापसी फरवरी, 1989 तक पूर्ण हो गई थी, इस वापसी के बाद भी कुछ समय तक काबुल में पीडीपीए सरकार के लिए उसकी हथियार और आर्थिक सहायता जारी रही। न केवल उनके एक दशक लंबे अभियान के दौरान प्रयोग में लाई जाने वाली बड़ी मात्रा में सैन्य सामग्री और खाद्य-आपूर्ति को सोवियत टुकड़ियों ने सीमा पार करते हुए वहीं छोड़ दिया था, बल्कि उन्हें पर्याप्त सोवियत सहायता का आश्वासन भी दिया था, जिसके बारे में कतिपय स्रोतों ने मोटे तौर पर 300 मिलियन डॉलर प्रतिमाह का अनुमान लगाया था, जिसे राष्ट्रपति नजीबुल्ला के समाजवादी शासन को स्थापित करने के लिए प्रयोग में लाया जाना था। पश्चातवर्ती वर्षों में इराक को दी गई अमेरिकी सहायता की तुलना में यह तुलनात्मक दृष्टि से एक छोटी राशि

प्रतीत होती थी, परंतु उस समय तो ऐसी सहायता का वचन मात्र ही काबुल में सरकार के लिए एक महत्वपूर्ण प्रोत्साहन था। उन हथियारों के अलावा, जो पश्चिमी यूरोप में कुछ विभाजित होते शासन पीछे छोड़ गए थे अथवा अफगानिस्तान को हस्तांतरित कर गए थे, ऐसा अन्य प्रोत्साहन अत्यंत अल्प ही था जिसकी आशा काबुल सरकार सोवियत संघ के तत्कालीन गठबंधन सदस्यों से कर सकती थी। यहां तक कि यूएसएसआर की अर्थव्यवस्था को ध्यान में रखते हुए मास्को द्वारा वायदा की गई सहायता की मात्रा के भी जारी रहने की संभावना बहुत कम थी। तथापि, नब्बे के दशक में नजीबुल्ला सरकार अपनी रक्षा कर पाने में सक्षम प्रतीत हुई। इसकी वायु सेना हालांकि वह आपूर्ति और अनुरक्षण के लिए मास्को पर निर्भर थी, छोटी दूरी की मिसाइलों, टैंकों और ट्रकों ने राजधानी को अत्यंत महत्वपूर्ण सुरक्षा प्रदान की थी। 1989 के अधिकार भारत में सोवियत संघ राजधानी को सुरक्षित रखने के लिए एक सशक्त हवाई ब्रिगेड की स्थापना करने के लिए प्रतिदिन अनेक परिवहन जहाज काबुल भेजता था।

यह भी स्पष्ट हो गया था कि नजीब को अपनी नियमित सेना को अनुरक्षित करने तथा अपनी राष्ट्रपतीय गारद को सहयोग प्रदान करने और साथ ही पर्याप्त संख्या में नागरिक सेना का विश्वास हासिल करने के लिए, जिसमें नृजातीय उज्जेक नेता जनरल अब्दुल रशीद दोस्तम के नेतृत्व वाला दस्ता भी शामिल था, सोवियत संघ से प्राप्त वित्तीय सहयोग पर निर्भर रहना पड़ता था। संदिग्ध-प्रति-अन्तर्दर्शी औचित्य से, सोवियत टुकड़ियों की वापसी मुजाहिद्दीन लड़ाकों के उत्साह को मंद करने का कार्य किया यहां तक कि उन स्थानों परभी जहां बाहरी इलाकों में उनका नियंत्रण बना हुआ था। उनमें से अनेक ने केन्द्रीय सरकार से अधिक संघर्ष न करने का तरीका अपना लिया था और उन्होंने अन्य स्थानीय समूहों के विरुद्ध अपनी स्थानीय ताकत को बनाए रखने के लिए एक रणनीति के तौर पर काबुल के साथ समझौता कर लिया था। ऐसा करते हुए, अनेक विद्रोह कमांडरों ने केवल केन्द्रीय सरकार के प्रति उनके व्यवहार की पारंपरिक प्रणाली को पुन: अपना लिया था जो अफगान जनजातीय इतिहास की विशेषता थी। अपनी ओर से नजीब इन समूहों से निपटने में पर्याप्त रूप से निपुण सिद्ध हुआ तथा उन्हें हाशिए पर ही रखा गया और उनसे आदिवासी निष्ठा को बनाए रखने की अपील की, कुछ को खरीद लिया, कुछ के साथ स्थानीय व्यवस्थाएं स्थापित की तथा कुछ को निदर्यता के साथ समाप्त कर दिया।

अगस्त, 1990 में जब उसने भारत का दौरा किया, तो नजीबुल्ला को यह दृढ़ विश्वास था कि वे सोवियत वापसी से उत्पन्न होने वाले तात्कालिक परिणामों को झेल लेंगे और देश के विशाल भागों पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लेंगे। हालांकि मुजाहिद्दीन ने अभी भी देश के बाहरी भाग में बड़े हिस्सों पर नियंत्रण किया हुआ था, उनका व्यापक नियंत्रण कुछ ही प्रांतीय केन्द्रों पर ही विस्तारित हुआ। नजीब की भारत यात्रा ने उसे भारत की ओर से प्राप्त होने वाली व्यावहारिक सहायता के परिमाण का अंदाजा लगाने में सहायता प्रदान की थी विशेष रूप से सोवियत साम्राज्य पर उसकी निरंतर बढ़ती हुई निर्भरता को कम करने के संदर्भ में। परंतु उसने यह भी महसूस किया था कि समाप्त होती और अलग-थलग पड़ी वी.पी. सिंह सरकार से उसे कोई भी प्रमुख अतिरिक्त सहयोग अथवा व्यावहारिक सुविधा प्राप्त होने की संभावना नहीं है। प्रधानमंत्री ने एक संप्रभु गुट-निरपेक्ष और स्वतंत्र देश के रूप में अफगानिस्तान की हैसियत को संरक्षित रखने के लिए सहयोग

की अपनी पारंपरिक स्थिति को दोहराया। भारत यह चाहता था कि अफगानिस्तान बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप अथवा दखलअंदाजी के स्वयं ही अपनी स्थिति का राजनीतिक समाधान कर ले तथा यह एक ऐसा समाधान होगा जिसमें समस्त विद्यमान हकीकतों पड़ोसी देशों के वैध हितों को ध्यान में रखा जाएगा। उस वर्ष विदेश मंत्री स्तर पर आयोजित भारतीय-अफगान संयुक्त आयोग की बैठक में नशीले पदार्थों के अवैध व्यापार के निवारण सहित कृषि, आवश्यक वस्तुओं की सहायता, नागर विमान, दूरसंचार और सांस्कृतिक आदान-प्रदान पर सहयोग में करारों पर हस्ताक्षरित किए गए थे। हमारे अपने विषम परिवेश को ध्यान में रखते हुए ये वायदे अप्रासंगिक नहीं थे। तथापि, नजीब के लिए, भारत में दक्षिणपंथी दलों के शब्दाम्डबरों को ध्यान में रखते हुए, भारत से राजनीतिक सहायता प्राप्त करना उसके लिए अत्यंत आवश्यक था।

काबुल पहुंचना

अजीयर्स के बाद काबुल राजदूत के रूप में मेरी दूसरी तैनाती बनने जा रही थी। अफगानिस्तान प्रस्थान से पूर्व, काबुल में तैनात तत्कालीन सीडीए द्वारा बरती गई वित्तीय अनियमितताओं और आचरण नियमों के उल्लंघनों के कतिपय मुद्दों के कारण उन्हें जल्द ही मुख्यालय बुला लिया गया था। इसके फलस्वरूप, तत्कालीन एमईए डेस्क निदेशक भद्र कुमार को मामलों का निपटान करने के लिए कुछ सप्ताह तक काबुल भेजा गया था। इसके बावजूद, मैं एक सुनियोजित मिशन के तहत अक्तूबर, 1990 में प्रारंभ में काबुल पहुंचा जब वहां पर अत्यंत जोखिम सुरक्षा परिवेश था। जैसे ही मैंने रेत के बोरों से घिरे आवासीय परिसर में प्रवेश किया, मैं वहां के बगीचे में मुहाहिद्दीन के रॉकेट द्वारा किए गए आठ फीट गहरे गड्ढे को देखकर स्तब्ध रह गया जो मेरे वहां आगमन से कुछ सप्ताह पूर्व किए गए आक्रमण में बना था। यह हमला किसी अन्य स्थान के लिए आशयित था, परंतु रॉकेट भारतीय निवास पर आकर गिरा था। इस विस्फोट के प्रभाव ने निवास के मुख्य स्वागत-कक्ष क्षेत्र के बड़े भाग को अपनी चपेट में ले लिया था और अनेक खिड़कियों को तोड़ दिया था। बगीचा भी बुरी तरह से क्षतिग्रस्त हुआ था। यह बगीचा कभी समस्त काबुल में सबसे सुंदर गुलाब की झाड़ियों के लिए प्रसिद्ध हुआ करता था। हालांकि नुकसान की भरपाई कुछ ही सप्ताह में कर दी गई थी, मेरे एक वर्ष के प्रवास के दौरान ऐसे तीन विस्फोटक हमले, मुजाहिद्दीन द्वारा वहां किए गए थे, दो उस समय जब मैं निवास से बाहर था और एक तब जब मैं उस बगीचे में चहल-कदमी कर रहा था। इनमें से अनेक अनिवार्यत: संपार्श्विक क्षतियां थीं जो उन मिसाइलों और गोला-बारूद द्वारा की गई थी जिनका लक्ष्य या तो अर्क महल था या फिर ये वजीर अकबर खान क्षेत्र की ओर साधे गए थे जहां वरिष्ठ परचम नेता रहा करते थे। कभी-कभी तो वे सिर्फ अंधाधुंध की गई गोलाबारी का ही परिणाम हुआ करते थे। एक अवसर पर, तो मुझे एक गोले के हमले हमारे रसोइए भारत सिंह नेगी तथा एक अफगानी सेवक द्वारा दर्शाई गई सर्तकता से बचा लिया गया था जो हमारे काबुल प्रवास के पूरे समय हमारे साथ निवास पर तैनात थे और वहीं रहा भी करते थे।

मेरे प्रत्यय-पत्र प्राप्त करते हुए राष्ट्रपति नजीबुल्ला ने हमारा गर्मजोशी और सौहार्दपूर्ण स्वागत किया और मुझे उनके कार्यालय तक पूर्ण और निर्बाध पहुंच प्रदान करने का आश्वासन दिया। साथ ही, उन्होंने भारत के साथ अपने देश के सुदृढ़ संबंधों तथा भारतीय नेताओं के साथ उनकी

वैयक्तिक प्रगाढ़ मित्रता का उल्लेख भी किया। उनके घनिष्ठ सलाहकार और मंत्रिमंडल के प्रमुख मोहम्मद इशाक तोखी ने भी हमारा गर्मजोशी से स्वागत किया। विदेश मंत्रालय का व्यवहार सौहार्दपूर्ण कम था परंतु संभवत: औचित्यपूर्ण अधिक प्रतीत होता था। विदेश मंत्री अब्दुल वकील अत्यंत सतर्क और कतिपय अड़ियल प्रतीत होते थे। उन्होंने केवल विद्यमान मुद्दे पर ही चर्चा की परंतु अन्य अधिकारियों जैसे मोहम्मद कॉयान ने गर्मजोशी और मैत्रीपूर्ण भावना प्रदर्शित की। इसके अलावा, पीडीपीए के परचम धड़े, जिसे हाल ही में वतन पार्टी का नाम दिया गया था, के अनेक प्रमुख सदस्यों ने भी मैत्रीपूर्ण, औपचारिक और वैयक्तिक रूप से गर्मजोशी भरा रवैया प्रदर्शित किया। मैं अनेक नेताओं को भी अत्यंत सौहार्दपूर्ण और मित्रवत् व्यवहार प्रदर्शित करते हुए पाया जैसे अब्दुल रहीम, हातिफ, महमूद बर्यालयी(जो उस समय कैद में नहीं थे), श्रीमती बर्यालयी, मोहम्मद मोहताट और केश्तमंद। इनके अलावा, काबुल में मुझे लेने मेरे पुराने मित्र फरीद जरीफ और उनकी पत्नी आलिया लेने भी आए थे जो विदेश में कई वर्ष की सेवा करने के उपरांत वापस राजधानी में लौटे थे। मैं कुछ समय उपरांत ही प्रधानमंत्री खलीक्यार से मिल पाने में समर्थ रहा जिसका मुख्य कारण उनका खराब स्वास्थ्य रहा था परंतु उनकी शांत गरिमा और उत्कृष्ट व्यवहार ने मुझे काफी प्रभावित किया, हालांकि मेरे कुछ राजनयिक सहयोगी उन्हें 'रूखे व्यवहार' वाला ही मानते थे। मैं जल्द ही अत्यंत प्रतिबंधित राजनयिक कोर के भीतर अपनी औपचारिक कॉल करने तथा अन्य सरकारी नेताओं और भारत के रुचि की अन्य संस्थाओं का दौरान करने में भी समर्थ रहा जैसे आईजीआईसीए जिसके निदेशक प्रतिष्ठित डा. सलाम जलाली थे, जो स्थानीय टीवी पर पश्तो सेवा के समाचार प्रस्तुतकर्ता भी थे। यह उल्लेखनीय है कि काबुल में राजदूत के तौर पर मेरे आगमन के लगभग डेढ़ वर्ष के भीतर मार्च, 1992 तक मुझे काबुल में राजनयिक कोर का डीन बनना था और इस पद पर मुझे अप्रैल-अक्तूबर, 1992 की तनावपूर्ण अवधि और अप्रत्याशित घटनाक्रमों के दौरान ही कुछ प्रमुख उत्तरदायित्वों का निर्वहन करना था।

बढ़ता दबाव

इस दौरान, अक्तूबर, 1990 में सरकार को प्रतिकूल परिस्थिति का सामना करना पड़ा जब हिज्बुल-इस्लामी ने मध्य अफगानिस्तान के उरोज्गेन प्रांत की राजधानी तरीन कोर पर नियंत्रण हासिल कर लिया। सरकार की सेनाओं ने शहर के पश्चिमी और दक्षिण-पूर्व भागों में हिज्म ठिकानों के विरुद्ध अपने स्वयं के हवाई हमलों और मिसाइलों का प्रयोग करते हुए काबुल के विरुद्ध किए गए हमलों का मुंहतोड़ जवाब दिया तथा नागरहर के पूर्वी प्रांत में हेकमत्यार के अनेक कमांडरों को परास्त किया। इसके अलावा, काबुल के बाहरी हिस्सों में सरकार ने यह दावा किया कि उसने बड़ी संख्या में विरोधी सेनाओं को पराजित कर दिया है और मिसाइलों तथा बारूदी सुरंगे जब्त कर ली हैं। काबुल पर बढ़ता संकट हेकमत्यार द्वारा प्रस्तुत की गई चुनौतियों का स्पष्टत: एक भाग था जिसने यह रेखांकित किया था कि वह काबुल पर नियंत्रण हासिल करने के लिए उसकी नागरिक आबादी पर भी हमला करने के लिए तैयार है। इस चुनौती को मुख्य रूप से पाकिस्तान की आसूचना सेवाओं का भी पूर्ण समर्थन प्राप्त था। जबकि काबुल ने पाकिस्तान के सीडीए फिदा यूनुस ने ऐसी रिपोर्टों का खंडन किया था, विपक्षियों द्वारा ऐसे आसन्न हमलों के बारे में पश्चिमी और तुर्की के राजनयिक स्रोतों द्वारा व्यापक चिंता व्यक्त की गई थी। अपनी ओर से, नजीब ने उन्हें अफवाहें बताते हुए ऐसी

रिपोर्टों का खंडन किया तथा दावा किया कि सरकार ऐसे किसी भी हमले को निष्फल करने में समर्थ है। परंतु, विरोधियों द्वारा शहर के दक्षिण की ओर लगभग 20 किमी तक काबुल के सुरक्षा घेरे को तोड़ दिए जाने और दो बड़े राजमार्गों को बंद कर दिए जाने के बारे में निरंतर रिपोर्टें आती रहीं। काफी समय उपरांत ही हमें यह पता चला कि आईएसआई ही ऐसी कार्यावाही संचालित करने की योजना को क्रियान्वित कर रही हैं, परंतु अन्य मुजाहिद्दीन संगठन, विशेष रूप से मसूद इसका विरोध कर रहे हैं। अमेरिका ने यह दावा कि केवल उनके ही दबाव में हेकमत्यार और पाकिस्तान सरकार इस योजना को अस्थायी तौर पर त्यागने के लिए सहमत हुए[2] थे।

काबुल शासन के लिए निर्णायक महत्व का एक मामला सोवियत संघ में होने वाले राजनीतिक परिवर्तनों से जुड़ा हुआ था। गोर्बाचेव द्वारा ऐसे वायदे और विश्वास के साथ प्रारंभ किया गया आर्थिक और शासकीय अभियान(पेरेस्त्रोइका) अब अत्यंत निराशाजनक और अनिश्चित स्थिति में चला गया था। उनके शासन संभालने के समय के प्रारंभिक वर्षों में सोवियत नेताओं द्वारा हासिल की गई व्यापक प्रशंसा वरिष्ठ राजनीतिक पदों तथा सशस्त्र बलों के मध्य उत्पन्न होने वाली संदेह और संशय की स्थिति के चलते समाप्त होनी प्रारंभ हो गई थी। मास्को का अन्य गणतंत्रों पर स्थापित किया गया नियंत्रण भी निरंतर प्रश्नों के घेरे में आता जा रहा था तथा आरएसएफआर में येल्त्सिन के साथ प्रारंभ होने वाली इस व्यवस्था में अब स्वयं सोवियत संघ के विघटन तक होने की परिस्थितियां उत्पन्न हो गई थीं। परंतु ऐसा नहीं हुआ। हमने जो अनुभव किया, वह यह था कि वह समय अत्यंत संशय और अनश्चितता से भरा था जिसमें अफवाहों के दौर चलते थे। परंतु सोवियत संघ पर अफगानिस्तान की अर्थव्यवस्था और सैन्य तंत्र की निर्भरता को ध्यान में रखते हुए, इन घटनाक्रमों पर नजीब द्वारा और काबुल में उनके वरिष्ठ दल के सदस्यों द्वारा निरंतर निराशा के साथ नज़र रखी जा रही थी। पहले ही, मई, 1990 में लोयाजिर्गा के उपरांत मास्को के अनुरोध पर नजीब ने उनके पुन: नाम दिए गए दल (अब वतन या होमलैंड पार्टी) के आधार को और व्यापक करने का प्रयास किया था तथा सरकार में महत्वपूर्ण पदों पर बाहर से नियुक्तियां कीं। नब्बे के दशक के अंत में, उसने खलिक्यार की अध्यक्षता में भूमिगत सुरंगों और न फटे विस्फोटकों को हटाने के लिए एक राष्ट्रीय आयोग की स्थाना की।

राष्ट्रपति स्वयं पहले से ही पूर्व-सम्राट जाहिर शाह के सलाहकारों सहित प्रख्यात प्रतिपक्षी हस्तियों से बातचीत करने का प्रयास कर रहे थे ताकि विवाद का कोई राजनीकि समाधान तलाशा जा सके। इन प्रयासों को पेशावर प्रतिपक्षियों द्वारा नेमी तौर पर खारिज किया जा रहा था जो देश के भीतर नजीब के गिरते हुए सहयोग का प्रतीक था तथा इसे केवल केन्द्रीय सरकार पर दबाव में वृद्धि ही हुई। हर कोई यही अनुमान लगा रहा था कि मास्को से मिलने वाली अत्यंत महत्वपूर्ण सहायता कब तक जारी रह पाएगी क्योंकि क्रेमलिन के नेतृत्व वाले राजनीतिक वर्ग में भी काबुल शासन को सहयोग जारी रखने के संबंध में मतभेद उत्पन्न होता जा रहा था। अब तक, गोर्बाचेव के कुशल नेतृत्व के भीतर भी सोवियत सेना द्वारा यह सहायता विस्तारित की जाती रही थी। यहां तक कि

---

[2] देखिए पीटर टॉमसेन : दि वार्स ऑफ अफगानिस्तान मैसिएनिक टेरेरिज्म। ट्राइबल कंफ्लिक्ट्स एंड दि फेल्यूर ऑफ ग्रेट पावर्स 2013.

जब खाद्य-सामग्री और अन्य उपभोक्ता सामान से भरी गाड़ियों के काफिलों को राजधानी में मुजाहिद्दीन हमलों से बाधा पहुंचाई गई, तो इस रसद को हवाई मार्ग द्वारा उपलब्ध कराया गया तथा आम जनता को इनकी आपूर्ति का आश्वासन दिलाया गया। लेकिन, ऐसे आश्वासन भी अब कम ही होते जा रहे थे।

मिशन और राजनयिक परिवेश

आर्थिक व्यवस्था की अत्यंत नाजुक स्थिति के बावजूद, काबुल ने 1990 की समाप्ति पर संभवत: एक दृढ़ भावना स्वत: तब प्रदर्शित की जब मैं वहां कम संख्या में विद्यमान भारतीय समुदाय से भेंट करने के लिए पहुंचा। मुझे आशा माई मंदिर तथा कम-से-कम तीन सिख गुरुद्वारों में आमंत्रित किया गया था तथा इन सभी धार्मिक स्थलों पर श्रद्धालुओं द्वारा मेरा अत्यंत उत्साह के साथ स्वागत किया गया जिनके निष्कपट हृदय उनके देश के अधिकारक अधिकारी की उपस्थिति से गर्मजोशी से भर गए थे। सप्ताह की समाप्ति पर, मैं क्वारगा झील क्षेत्र में मिशन के सदस्यों के साथ पिकनिक मनाने भी जाया करता था विशेष रूप से जब दूतावास में काम करने वाले कर्मचारियों और संयुक्त राष्ट्र के कार्मिकों के बच्चे वहां दिवालियों में और उसके आस-पास छुट्टियों के दौरान एकत्र हो जाया करते थे। ऐसी पिकनिक से शहर के भीतर पूरे सप्ताह किए गए कार्य के बोझ से मुक्ति मिल जाया करती थी परंतु साथ ही इससे रोमांच भी मिलता था और कभी-कभी इसमें खतरे का अंश भी शामिल होता था। ऐसा असामान्य नहीं था कि पिकनिक के दौरान हमें साकर अथवा स्कड मिसाइलों की गरज सुनाई देती थी जो किसी दूर-दराज के स्थानों से चलाई जा रही होती थीं, परंतु ऐसा भी प्रतीत होता था कि अधिकांश मिसाइलें नजदीकी सरकारी मिसाइल पोस्ट से दागी जा रही हैं। हमने जल्द ही उनके द्वारा उत्पन्न की गई ध्वनि को पहचानना भी सीख लिया तथा हमें 'आने वाली' और 'जाने वाली' मिसाइलों की ध्वनि के बीच अंतर करना भी आ गया। इसके अलावा, इस अवधि के दौरान(लगभग नब्बे के दशक की समाप्ति पर)मैं सरकार को इस बात के लिए मनाने के लिए भी सफल हो गया कि वे मुझे तत्काल ही जलालाबाद का दौरा करने की अनुमति प्रदान करें। इस दौरे का मुख्य आशय शीशम बाग स्थित बादशाह खान के मकबरे को देखना था परंतु साथ ही वहां रह रहे भारतीय समुदाय के प्रमुख सदस्यों से भेंट करना और देश के उस संवेदनशील भाग की स्थिति का जायजा लेना भी था। हालांकि सरकार का दावा था कि जलालाबाद में सुरक्षा की स्थिति सामान्य है, परंतु मैं उस शहर में दस से अधिक घंटे व्यतीत कर पाने में भी असमर्थ रहा और उसी शाम वहां से लौट आया। यहां काबुल में, जिन लोगों में से मिला और हमारे आस-पास रह रहे थे, उनके मध्य में जिंदादिली की 'कृत्रिम' भावना देखने में समर्थ रहा। जबकि, स्पष्ट रूप से कुछ लोगों द्वारा ऐसे साहस प्रदर्शन का दिखावा किया जा रहा था, परंतु वस्तुत: इस अभिवृत्ति के पीछे नैसर्गिक दृढ़ता का भाव निहित था जिसे मैंने अत्यंत प्रेरणाप्रद पाया। विषम परिस्थितियों में भी, ये साधारण लोग अपनी आशावादिता की अटूट भावना को बनाए रखते थे तथा जीवन जीते रहने के लिए अति-उत्साही आत्मविश्वास और दृढ़ संकल्प कायम रखते थे, जिसकी प्रशंसा किए बिना नहीं रहा जा सकता था।

हालांकि अन्य मिशनों की ही भांति, भारतीय मिशन को नजीब के राष्ट्रपति की अधिकांश अवधि के दौरान औपचारिक तौर पर गैर-पारिवारिक स्थल घोषित किया गया था, कर्मचारियों के परिवार के सदस्य ग्रीष्मकाल की छुट्टियों में तथा प्रमुख अवकाशों जैसे दिवाली अथवा क्रिसमस के दौरान अनेक बाद दिल्ली से वहां आया-जाया करते थे। राजदूत अंसारी के उप मिशन प्रमुख के प्रस्थान के उपरांत इस मिशन में मैं तथा प्रथम सचिव अशोक कुमार ही विदेश सेवा अधिकारियों के रूप में रह गए जबकि वरिष्ठ पारसी भाषांतरणकार कुरैशी काबुल पर सोवियत कब्जे और उसके पश्चात् की अधिकतर अवधि के दौरान प्रमुख 'सूत्रधार' के रूप में वहां तैनात रहे। रक्षा सेवाओं की ओर से मुझे कर्नल अमर सिंह का सहयोग प्राप्त हुआ जो अत्यंत प्रेरित सशस्त्र कोर अधिकारी थे जिनके पास सेना मुख्यालय का पर्याप्त अनुभव था और वे सक्षम एवं सतर्क सहयोग कार्मिकों के साथ थे जबकि वायु सेना मुख्यालय की ओर से भी ग्रुप कैप्टन बिजय कुमार पांडे अत्यंत सक्षम, प्रेरित थे और आपातस्थितियों में दक्षता प्राप्त किए हुए थे। कांसुलर स्कंध में, योगेश प्रसाद ने प्रारंभ में अपनी दक्षता से लगभग समाप्त हो चुके राजनयिक समुदाय में अनेक संपर्क स्थापित किए थे परंतु काबुल के भीतर अधिकारिक क्षेत्र में उनके संपर्क कुछ सीमित प्रतीत होते थे। उनके पश्चात् आने वाले रिशपाल सिंह 1991 के प्रारंभ में अपनी तैनाती के कुछ माह बाद ही एक दक्ष तरीके से अपनी सीमाओं के बावजूद बेहतर कार्य करने में सफल रहे। जबकि अशोक कुमार काम को सीखने के प्रति उत्सुक और इच्छुक बने हुए थे, यह स्पष्ट था कि मिशन के चारों ओर विद्यमान भौतिक असुरक्षा और शहर पर निरंतर होती बमबारी ने उन पर विशेष रूप से उनकी पत्नी पर राजधानी में उनके प्रारंभिक प्रवास के दौरान गहरा प्रभाव डाला था। इसके फलस्वरूप शीर्ष ही तनाव की स्थिति व्याप्त हो गई और अनेक प्रकार के तनावग्रस्त संलक्षण दिखाई देने लगे परंतु अधिकारिक रूप से ऐसे प्रभाव उनके कार्य पर परिलक्षित नहीं हुए और न ही इनके कारण उन्हें इस तैनाती से कोई राहत ही प्राप्त हुई। वे पूरे साहस के साथ तब तक अपना कार्य करते रहे जब तक अंतत: हमारे लिए अप्रैल, 1992 की मौसमीय घटनाओं के उपरांत वहां से पलायन करना अनिवार्य नहीं हो गया। लेकिन, मैं यह दावा कर सकता हूं कि हम एक दल के रूप में अत्यंत दक्षता के साथ कार्य करते रहे और हमने काबुल में राजनयिक क्षेत्र के साथ, स्थानीय जनता के साथ तथा हमारे हित और चिंता से जुड़े अधिकारियों के साथ पर्याप्त संपर्क बनाकर रखा।

अफगानिस्तान में राजनयिक क्षेत्र एक अत्यंत प्रतिबंधित क्षेत्र था जिसमें 20 से भी कम निवासी मिशन थे तथा अधिकांश परिसर बंद पड़े थे जिनमें केवल केयरटेकर ही उनका ध्यान रख रहा था और राजनयिक स्तर का कोई अधिकारी वहां नहीं था। संभवत: सबसे बड़ा मिशन सोवियत संघ का था जिसमें सैकड़ों कर्मचारी और तकनीशियन थे तथा यह दारुल अमान महल को जाने वाली सड़क पर स्थित था, लेकिन यहां भी कुछ ही राजनयिक अधिकारी थे जिनमें सर्वाधिक दृश्यमान राजदेत बोरिस पास्तुखोव और उनके मंत्री-कांसुलर जामिर काबुलोव थे जो एक अत्यंत जानकार और अत्यंत सक्षम वृत्तिक थे जिन्होंने उस क्षेत्र में अनेक वर्ष बिताए थे तथा वे काबुल से इस्लामाबाद तक की जानकारी रखते थे। राजदूत पास्तुखोव के साथ मेरी नियमित मुलाकातें होती थीं परंतु वे सभी औपचारिक होती थी जो प्रत्येक दो माह में एक बार तो हो ही जाया करती थीं तथा हमने एक गहन दौरा भी किया था जिससे मुझे उन बातों भी अधिक जानकारी प्राप्त हुई थी जिनके बारे में

पहले से जानता था अथवा जो मुझे काबुल में विद्यमान सामान्य राजनयिक हलचलों के बारे में पहले पता थीं। जामिर अधिक जानकारी था तथा खुलापन लिए हुए था, यहां तक कि वह मास्को से प्राप्त निर्देशों के अनुसार कार्य करने की सरकार की विवशता से भी कभी-कभी खिन्न हो जाता था और उसका निंदक भी था। दुर्भाग्यवश, सोवियत राजनयिकों के लिए यह एक अत्यंत कठिन समय था तथा सोवियत संघ के विघटन तथा नए रूसी गणराज्य और स्वतंत्र राज्य परिसंघ (सीआईएस) के जन्म की अवधि के दौरान काबुल द्वारा महसूस की जाने वाली चुनौतियों के संबंध में उनसे किसी स्वामीभक्ति की आशा नहीं की जा सकती थी। वारशा संधि के अन्य प्रमुख मिशनों में, जो काबुल में निरंतर कार्य करते रहे थे, बुलगारिया, हंगरी और पोलैंड का नाम प्रमुख है। अमेरिका और यूके दूतावासों के बंद होने के बाद उनके परिसरों को स्थानीय ओवरसीयरों के प्रभार में सौंप दिया गया, जिनमें से एक पॉल मैथ्यू था, जो एक दक्ष और पहुंच वाला वृद्ध मलायाली-ईसाई था जिसका एरियाना एयरलाइंस के साथ एक लंबा संबंध रहा था और जिसकी पत्नी रोज ब्रिटिश परिषद पुस्तकालय संचालित करती थी। सीडीए स्तर पर मुख्य रूप से प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य कुछ पश्चिमी मिशन फ्रांस और इटली के थे, जो अत्यंत सक्रिय थे, जिनके साथ संयुक्त राष्ट्र के रेजीडेंट समन्वयक डेविड लॉकवुड को भी अक्सर देखा जाता था। पश्चिम जर्मनी के मामले में, एक अधेड़ उम्र की महिला मिशन की संपत्ति की देखरेख करती थी तथा राजनयिक समुदाय के भीतर अत्यंत सक्रिय भी रहती थी परंतु एक राजनयिक के रूप में उसकी स्थिति संशयवादी थी। अन्य में, प्रधानता, स्पष्टता अथवा अति-सक्रिय राजनीतिक पहुंच में सतर्कता के संदर्भ में पाकिस्तान, ईरान, तुर्की, चीन और इंडोनेशिया के मिशन प्रमुखों का नाम था। मैं इनमें से अधिकांश के साथ और घनिष्ठ संपर्क बनाने तथा अनौपचारिकता के एक बेहतर स्तर को कायम रखने में सफल रहा। पाकिस्तान के सीडीए फिदा युनूस, जो एक प्रतिष्ठित और अल्पभाषी पठान राजनयिक थे, और कथित रूप से स्पेशल ब्रांच से संबंध रखते थे, अत्यंत विनम्र और उदार हृदय वाले थे परंतु वे विशेष रूप से मेरे साथ अत्यंत सीमित बात करते थे और किसी जानकारी को साझा नहीं किया करते थे। तात्कालिक मुद्दों के बारे में पाकिस्तान की प्रतिक्रिया अथवा उनके उत्तर के बारे में अधिकांश जानकारी में तुर्की के प्रभारी अयकुट सेट्रिजे से हासिल करता था, जो एक मिलनसार, जानकार व्यक्ति थे तथा अपनी टिप्पणियां अत्यंत सहजता के साथ प्रकट कर दिया करते थे। मेरा उनके साथ संपर्क विशेष रूप से बाद वाले महीनों में उपयोगी सिद्ध होना था, जब उनके सहयोगी अवनी बोर्तसाली बेनन सीवन के दल में संयुक्त राष्ट्र में पद ग्रहण करने के लिए चले गए। मैं बेनन को व्यक्तिगत तौर पर जानता था और उनसे घनिष्ठ संपर्क बनाए हुए था तथा संयुक्त राष्ट्र के दल से उनके इस अतिरिक्त जुड़ाव से 16 अप्रैल, 1992 के बाद वाली निर्णायक अवधि के दौरान अत्यंत सहायता प्राप्त हुई। इंडोनेशिया हमारा निकटतम पड़ोसी दूतावास था क्योंकि उनका निवास भारतीय मिशन के ठीक सामने सहर-ए-नऊ में था। उनके प्रभारी हेविड निवास में टेनिस के नियमित साथीदार थे। चीनी अत्यंत सीमित रहते थे तथा बहुत कम जानकारी का आदान-प्रदान करते थे और सीमित टिप्पणियां करते थे। हालांकि दारी और पश्तो में उनकी जड़ें काफी गहरी थीं, उनकी अधिकांश सूचना और विश्लेषण राजनयिक स्रोतों के स्थान पर पाकिस्तानियों और स्थानीय लोगों से प्राप्त होता था। चीनियों को मेरे द्वारा प्रदान की गई उत्कृष्ट 'तकनीकी' सहायता के फलस्वरूप मैं चीनियों के साथ अपनी मित्रता सुदृढ़ कर पाने में सफल

रहा। भारतीय निवास में उनके एक दौरे के दौरान चीनी कांसुलर हतप्रभ रह गए जब मैंने उन्हें चीनी स्प्रिंग रोल प्रस्तुत किए। ऐसे स्प्रिंग रोल चीन में अत्यंत आम और लोकप्रिय थे परंतु काबुल में उपलब्ध नहीं थे। समस्या यह थी कि चीनी दूतावास में कोई भी गृहणी यह नहीं जानती थी कि रोलों को तैयार करने के लिए क्रेप का आटा किस प्रकार 'तैयार' किया जाता है। चीन में तो वे स्टोरों में जाकर सीधे वह क्रेप खरीद लिया करती थीं। काबुल में इसे प्राप्त करना असंभव था तथा इन स्प्रिंग रोलों के प्रति उनकी उत्कंठा की समाप्ति काबुल में मेरे रसोइए के आगमन के उपरांत ही हुई। उनके अनुरोध पर भारत व्यक्तिगत रूप से चीनी दूतावास गया और वहां उसने गृहणियों को इस अनूठे चीन भोजन को तैयार करने के गुर बताए। दो सप्ताह बाद उसकी मेहनत का फल देखने के लिए मुझे आमंत्रित किया गया तथा इसी प्रक्रिया में मुझे चीनी व्यंजनों का स्वाद उठाने के लिए आमंत्रित किया गया।

राष्ट्रपति तथा श्रीमती फतना नजीबुल्ला के साथ मेरे एक अविस्मरणीय भेंट वर्ष बीतने के बाद हुई। मैंने पिछले वर्ष राष्ट्रपति के साथ अनेक बार भेंट की थी परंतु ऐसा पहली बार हुआ था कि मुझे और मेरी पत्नी को राष्ट्रपति द्वारा औपचारिक रात्रिभोज के लिए आमंत्रित किया गया था। यह उन तीन दौरों में से पहला दौरा था जब मेरी पत्नी और उनके पिता ने मेरी पुत्रियों के साथ काबुल की यात्रा की थी और राष्ट्रपति तथा प्रथम महिला द्वारा हमें भेंट करने के लिए प्रथम बार आमंत्रित किया गया था। उन दिनों काबुल में रात्रिभोज अत्यंत जटिल प्रक्रिया हुआ करता था जो लगभग शाम को 6 बजे प्रारंभ हो जाता था तथा रात्रि 8 बजे कर्फ्यू लगने के समय तक लोग अपने-अपने घरों को लौट आते थे। हम वहां शाम 7 बजे से पहले पहुंच गए तथा राष्ट्रपति और उनकी पत्नी ने हमारा गर्मजोशी के साथ स्वागत किया। हम वहां विशिष्ट अफगान शैली में फर्श पर बैठे तथा भोजन बड़े-बड़े साझे बर्तनों में सामूहिक रूप से परोसा गया। राष्ट्रपति उस समय एक अत्यंत सामान्य व्यक्ति के रूप में थे तथा उनका व्यक्तित्व मुखर प्रतीत होता था। उन्होंने न केवल पूरे विश्वास और दृढ़ता के साथ हमें अपने पेशेवर अतीत और आयुर्विज्ञान शिक्षा के विषय में बताया बल्कि पीडीपीए के साथ अपने संबंधों और अपनी सैद्धांतिक विचारधारा का भी गहन बोध कराया। उन्होंने सतर्कता के साथ किसी व्यक्ति-विशेष के विषय में कोई उल्लेख नहीं किया, परंतु परचम धड़े के साथ अपनी दृढ़ प्रतिबद्धता पर बोलते हुए उन्होंने देश के व्यापक स्थायित्व और भविष्य के लिए अपनी पठान प्रवृत्ति की सुदृढ़ता उत्कृष्टता के विषय में अपने विचार रखे। उनके साथ बात करते हुए मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं था कि मैं एक ऐसे अफगान नेता के साथ बात कर रहा हूं जो विभिन्न मुजाहिद्दीन धड़ों की ओर से उत्पन्न होने वाली जटिलताओं और राजनीतिक दबावों के बाद भी इस बात पर दृढ़ विश्वास रखता है कि उस स्थिति में भी उसके पास उन ताकतों को दूर रखने के लिए और कम-से-कम परिदृश्य पर बने रहने के लिए पर्याप्त शक्ति और राजनीतिक सहयोग विद्यमान है। मैंने उनसे कुछ ऐसे लोगों के बारे में पूछा जिन्हें मैं अधिक नहीं जानता था जैसे मैंने सत्तर के दशक के अंत में बेलग्रेड में डा. अनाहिता रातेब्जाद को देखा था जिन्हें मैं केवल एक ही बार मिला था तथा अन्य जैसे महमूद बर्यालई जिन्हें मैं कभी-कभी काबुल में मिला करता था और उनके साथ बात करने में आनंद उठाता था। नजीब अत्यंत शालीन थे तथा उन्होंने किसी के प्रति व्यक्तिगत वैमनस्य नहीं दर्शाया हालांकि वे उनके बारे में केवल सरसरी तौर पर ही बात करने के लिए इच्छुक थे। इसके बाद इन

टिप्पणियों से बाहर निकलते हुए और उर्दू में बोलते हुए, जैसा कि वे उस शाम के अपने वार्तालाप में उसका ही प्रयोग कर रहे थे, उन्होंने कुछ समय मेरी पत्नी के साथ वार्तालाप किया और भारतीय शास्त्रीय संगीत के बारे में उनकी रुचि को जानना चाहा। उन्होंने भारतीय नेतृत्व, विशेष रूप से राजीव गांधी के साथ अपने अनुभवों के बारे में व्यापार और मुक्त रूप से बताया तथा श्रीमती इंदिरा गांधी के प्रति सम्मान व्यक्त किया। अपने व्यक्तिगत और राजनीतिक जीवन के बारे में बोलते हुए राष्ट्रपति ने अपनी पत्नी और स्वयं के बारे में प्रेमपूर्वक और खुशामद के अंदाज में यह बताया कि वे दो विरोधी पठान घरानों से संबंध रखते हैं जिन्होंने ऐतिहासिक दृष्टि से एक-दूसरे के साथ युद्ध किया है। इसके उपरांत वार्तालाप को दूसरी तरफ मोड़ते हुए नजीब ने राष्ट्रीय हित के लिए अपनी संपूर्ण प्रतिबद्धता व्यक्त की और कहा कि 'सियासत' में रिश्तेदारों अथवा मित्रों के लिए कोई स्थान नहीं होता है। उसमें केवल राष्ट्र ही सर्वोपरि होता है। फताना की ओर मीठी मुस्कान बिखरते हुए उन्होंने हमें यह कहा कि यदि अपने देश की भलाई के लिए उन्हें अपनी पत्नी का जीवन लेने के लिए भी कहा जाएगा, तो वे ऐसा करने के लिए हमेशा तैयार रहेंगे। अपने व्यक्तिगत संबंध को ध्यान में रखते हुए वे उन्हें केवल यही विकल्प देना चाहेंगे कि वे किस प्रकार की मृत्यु चाहती हैं। मेरी पत्नी आज भी जब उस वार्तालाप का स्मरण करती है, तो यह स्वीकारती है कि वे उस समय अपनी घबराहट को नियंत्रण में नहीं कर पाई थी।

लेकिन उनके साथ हुए वार्तालाप का एक अधिक रुचिकर पहलू सोवियत संघ में होने वाली घटनाओं पर राष्ट्रपति द्वारा दी गई जानकारी से संबंधित है। सोवियत संघ में विद्यमान असमंजसपूर्ण राजनीतिक स्थिति और वहां पर चल रहे शक्ति के संघर्ष पर अपने विचार व्यक्त करते हुए राष्ट्रपति ने दृढ़तापूर्वक अपनी धारणा को अभिव्यक्त किया कि पेरेस्त्रोइका(पुनर्निर्माण) गोर्बाचेव को मजबूत बनाएगा और देश में उनकी स्थिति को मजबूत बनाएगा। नजीब इस बात से संतुष्ट थे कि अफगानिस्तान से सोवियत सेना की वापसी के बावजूद उनके देश के मास्को के साथ कुछ समय के लिए संबंध मधुर बने रहेंगे और यह कि गोर्बाचेव तथा मास्को में वरिष्ठ सैन्य अधिकारी, दोनों ही काबुल में एक स्थायी सरकार सुनिश्चित करने और उसे सहयोग देने के लिए प्रतिबद्ध हैं तथा यूएसएसआर के पहले से ही कमजोर मध्य एशियाई राज्यों में उग्रवादी इस्लामी प्रभाव के लिए जल मार्ग उपलब्ध नहीं कराएंगे। उनका विश्वास बुरी तरह डगमगा गया था, यह बात केवल उन महत्वपूर्ण घटनाओं से ही स्पष्ट हुई जो आने वाले अगस्त के दौरान मास्को में घटित हुई थीं।

1991 की घटनाएं

नव वर्ष 1991 के आगमन पर काबुल के आर्थिक गतिरोध के लिए मुजाहिद्दीन की ओर से पड़ने वाले दबाव तथा शहर पर आवधिक रूप से होने वाली बमबारी में वृद्धि हो गई थी जिससे स्थानीय जनसंख्या पर गहरा प्रभाव पड़ा। मार्च, 1991 में खोश्त पर कब्जा होने के बाद इतने बड़े पैमाने पर लूट और विध्वंस किया गया तथा आत्मसमर्थन किए गए स्थानीय प्राधिकारियों के साथ निर्दयतापूर्वक व्यवहार किया गया जिससे समूचे देश में चारों ओर सरकारी स्थापनाओं के मध्य भय व्याप्त हो गया और सरकारी पदाधिकारियों के मध्य विद्यमान संभावित विभाजक धड़ों के मध्य भी अस्पष्टता और अविश्वास की भावना उत्पन्न हो गई। नब्बे के दशक के प्रारंभ में तनई घटना के

उपरांत अपनी पार्टी के कामरेड़ों, विशेष रूप से देश के भीतर वरिष्ठ खाल्कियों के प्रति नजीब का संशय इतना स्पष्ट हो गया कि उनके व्यवहार ने उनके अपने साथी परचमियों के मध्य आलोचना पैदा करनी प्रारंभ कर दी थी जिन्होंने उनकी अत्यधिक गोपनीयता और निर्भरता के चलते उनके अल्प संख्या में सहयोगियों और घनिष्ठ साथियों में अत्यधिक असुरक्षा उत्पन्न कर दी।

इस दौरान, भारत में, 1990 की समाप्ति पर वी.पी. सिंह की सरकार के गिरने के उपरांत कार्यवाहक चन्द्रशेखर सरकार की स्थापना भी अफगानिस्तान के प्रति दृष्टिकोण में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं कर पाई। वाणिज्य, विधि और न्याय मंत्री सुब्रमणियम स्वामी द्वारा 1991 के नव वर्ष के प्रथम दिवस की गई यात्रा मुख्य रूप से एक औपचारिक यात्रा ही सिद्ध हुई जिसमें किसी ठोस मुद्दे पर विचार-विमर्श नहीं हुआ। अफगान अर्थव्यवस्था के लिए मूलभूत वस्तुओं और अवसंरचनात्मक जरूरतों की परिधि में भारतीय पक्ष को अफगान पक्ष की ओर से सौंपी गई सहायता मदों की लंबी सूची के बावजूद, नई सरकार काबुल सरकार को भारत की आर्थिक सहायता अथवा वस्तुओं के सहयोग में केवल हल्का सा ऊर्ध्ववर्ती समायोजन कर पाने में ही समर्थ हुई जिसे अनेक मदें शामिल की गई थी जैसे खाद्य और कृषि आपूर्ति, उपकरण और अनिवार्य कल-पुर्जे तथा अनेक क्षेत्रों को शामिल किया गया था जैसे परिवहन उद्योग और नागर विमान क्षेत्र, चिकित्सा आपूर्तियां और अस्पताल के उपकरण जो काबुल में इंदिरा गांधी बाल स्वास्थ्य संस्थान(आईजीआईसीएच) को संचालित और विस्तार करने से जुड़े हुए थे और साथ ही अनेक प्रकार की औषधियां और उपभोक्ता माल भी प्रेषित किया गया जो दुबई के रास्ते भेजा गया था। भारत द्वारा अफगानिस्तान को दी जाने वाली सहायता की एक मद 'जयपुर फुट' थी जिसने स्थानीय प्राधिकारियों के ध्यान और रुचि विशेष रूप से आकर्षित किया था तथा जिसके लिए निरंतर मांग की जाती थी। इसके लिए भारतीय चिकित्सकों द्वारा समूचे देश में बारूदी सुरंगों से अपंग और अपाहिज नागरिक जनसंख्या की कभी पूरी न होने वाली मांग को पूरा करने के प्रयास में अनेक शिविर लगाए जाने थे। इस मद ने, अन्य किसी भी सहायता मद की तुलना में भारत सरकार और भारत के लोगों की प्रति अफगान लोगों का आभार हासिल किया है। तथापि, भारतीय सहायता में किसी भी पर्याप्त वृद्धि में मुख्य बाधा पाकिस्तान द्वारा भारतीय माल को उसके अपने भू-भाग से अफगानिस्तान को सुरक्षित रूप से प्रेषित करने से स्पष्ट रूप से इंकार कर दिया जाना था। जैसे-जैसे अफगान की आर्थिक समस्याएं बढ़ने लगीं, दोनों पक्षों के बीच अनेक महीनों तक एक मुद्दे पर निरंतर वार्तालाप किया जाता रहा तथा वह उस देश को पर्याप्त खाद्य सहायता पैकेज प्रदान करना था। हालांकि अफगानिस्तान को 50,000 टन के साथ अनुदान और पण्य क्रेडिट का औपचारिक प्रस्ताव की मई में नजीब की यात्रा तथा सितम्बर, 1991 में उपराष्ट्रपति की यात्रा के पश्चात् ही घोषणा की गई, इस मामले पर पहली बार फरवरी, 1991 में अफगानिस्तान के विदेश मंत्री श्री अब्दुल वकील की यात्रा के दौरान चर्चा की गई थी। इस बात में कम ही संदेह था कि यह एक उदारवादी कदम था तथा संकट की उस घड़ी में अपने पड़ोसी की सहायता करने के लिए भारतीय पक्ष की ओर से था अपनी प्रतिबद्धता को पूर्ण किया गया था। तथापि, इस उल्लेखनीय सहायता के वितरण में इतना विलंब, संशय और अनिश्चितता उत्पन्न हो गई थी कि यह हमारे संबंधों में एक कड़ुवा अध्याय बन गया, भारत के प्रति अफगानिस्तान की सद्भावना को इसने बुरी तरह प्रभावित किया और यहां तक कि हमारी प्रतिबद्धताओं की साख के

बारे में भी प्रश्न उत्पन्न हुए। इस बात को स्वीकार किया जाता है कि इस संपूर्ण घटनाक्रम के पीछे एक मुख्य बाधाकारी कारक सहायता-सामग्री के वितरण के संभार-तंत्र की पर्याप्त जटिल प्रकृति का निहित होना था जिसमें शामिल था - उत्तर भारत से एक बड़ा चक्कर लगाते हुए माल की बंबई तक ढुलाई, उसके बाद उन्हें वाणिज्यिक जलयानों पर ढोकर सोवियत संघ के ओडेसा पत्तन तक लेकर जाना, उसके उपरांत विघटित हो रहे सोवियत संघ के लगभग संपूर्ण भू-भाग से ढोते हुए उसे उत्तर अफगान सीमा पर स्थित हेरातन शहर तक पहुंचाना और जहां से उसे अफगान सरकार द्वारा आगे अपने शहरों तक लेकर जाना। इस पूरी प्रक्रिया में, भेजा गया कंसाइनमेंट प्रेषण में एक साल से अधिक तक रहना था क्योंकि उसे पत्तनों में शिपमेंट का पर्याप्त विलंब झेलना पड़ता था तथा यूएसएसआर के भू-भाग के भीतर प्रेषण और ढुलाई के दौरान अत्यंत विषम परिस्थितियों से गुजरना पड़ता था। अप्रैल, 1992 तक, ये आपूर्तियां हेरातन तक नहीं पहुंच सकीं। आने वाले आगामी महीनों में, संपूर्ण कंसाइनमेंट ही अदृश्य हो गया क्योंकि यूएसएसआर के विघटन और नए सीआईएस के अभ्युदय के दौरान फैली अस्त-व्यस्तताओं और संशय के कारण इसका कोई पता ही नहीं चल पाया।

परंतु जैसे-जैसे सोवियत संघ की स्थिति स्पष्ट होती जा रही थी, भारत की ओर से 21 मई, 1991 को तमिलनाडु में श्रीपेरंबदुर में एक चुनाव रैली में एलटीटीई आंतकवादियों द्वारा किए गए हमले की अत्यंत स्तब्धकारी और दु:खद सूचना प्राप्त हुई जिसके फलस्वरूप कांग्रेस पार्टी के नेता और पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी की मृत्यु हो गई थी। जैसे ही इस त्रासदी की सूचना चारों ओर फैली, मुझे स्वयं डॉक्टर साहेब द्वारा संपर्क स्थापित किया गया जिन्होंने मुझसे इस रिपोर्ट की पुष्टि करने के लिए कहा। नजीब अत्यंत शोकाकुल थे और फोन पर ही रो पडे थे। उन्होंने अत्यंत करुणामयी शब्दों में राजीव गांधी के प्रति उनकी वैयक्तिक निष्ठा और मित्रता का वर्णन किया और बताया कि वे और उनकी पार्टी उस परिवार के प्रति कितने ऋणी है। अगली सुबह पार्टी के शीर्ष नेता तथा मंत्रिमंडल के अन्य सदस्य अपना शोक व्यक्त करने के लिए निवास पर पहुंचे। राष्ट्रपति स्वयं दिल्ली के लिए रवाना हो गए ताकि वे उनके अंतिम संस्कार में शामिल हो सकें तथा इस दु:ख की घड़ी में परिवार के साथ खड़े रह सकें। वे कार्यवाहक सरकार तथा वरिष्ठ कांग्रेस नेतृत्व के साथ संक्षिप्त बैठक के लिए वहां रुके और दो दिन के भीतर काबुल लौटे।

भारत में इन त्रासदीपूर्ण घटनाओं से ठीक पहले न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्र ने सार्वजनिक रूप से 'पांच-सूत्रीय शांति योजना' के आयामों का लोकार्पण किया जिसका महासचिव पेरेज डी क्यूलार द्वारा अफगानिस्तान के भीतर पेशावर, तेहरान, में 'अफगान लोगों के सभी समूहों के साथ' तथा रोम में पूर्व-सम्राट जाहिर शाह के सार्थियों के समस्त अवयवों के साथ किए गए परामर्श के परिणाम के रूप में वर्णन किया गया। बेनन सेवा, जो जब ओएसजीएपी के प्रमुख के रूप में अपने 'पद' के दूसरे वर्ष में थे, ने अप्रैल, 1991 में काबुल का दौरा किया और मुझसे मिलने वे निवास पर आए। व्यक्तिगत मित्रों तथा घटनाक्रम की बातचीत करने के उपरांत बेनन ने अपने परामर्शों तथा प्रस्तावों के व्यापक पैकेज के लिए संयुक्त राष्ट्र की स्वयं की योजनाओं का वर्णन अत्यंत सामान्य रूप से किया। उन्होंने मुझे उस समय का स्मरण कराया जब उन्हें मुजाहिद्दीन गुटों के साथ संपर्क बनाते हुए इस्लामाबाद में समय व्यतीत करना पड़ा था तथा आशा व्यक्त की कि इसके परिणामस्वरूप अंतत: एक ऐसी व्यवहार्य प्रक्रिया प्रारंभ होगी जिसमें काबुल में एक स्थायी 'व्यापक आधार' वाली

सरकार काबिज होगी। जैसा कि संयुक्त राष्ट्र द्वारा बताया गया था, पांच सूत्रीय प्रस्ताव औचित्यपूर्ण प्रतीत होता था तथा यह संभावित रूप से सभी अफगान पक्षकारों को स्वीकार्य था, हालांकि मैंने पाकिस्तानी सरकार के विषय में अपना संशय व्यक्त किया था कि वह मुजाहिद्दीन के मध्य सर्वसम्मति बनाने के लिए अपने सहयोगियों को प्रोत्साहित कर रही थी। संयुक्त राष्ट्र की योजना में वस्तुत: इन बातों का आह्वान किया गया था :(क) संप्रभुत्ता, प्रादेशिक एकता, राजनीतिक स्वतंत्रता तथा अफगानिस्तान की गुट निरपेक्ष और इस्लामी प्रकृति का परिरक्षण; (ख) उनकी अपनी सरकार का निर्धारण करने के उनके अधिकार को मान्यता जो बाहरी हस्तक्षेप, दबावग्रस्त उत्पीड़न अथवा बाधा से मुक्त हो; (ग) अफगान परंपरा के अनुरूप मुक्त और उचित चुनावों के लिए स्वीकार्य परिवर्ती व्यवस्थाएं और आवश्यक आश्वासन उपलब्ध कराना जो व्यापक आधार वाली सरकार की स्थापना में सहायक हो; (घ) 'सभी के द्वारा भी अफगान पक्षों को' हथियारों की आपूर्ति को समाप्त करना; और अंत में (ड.) देश के आर्थिक और सामाजिक पुनर्निर्माण के लिए तथा शरणार्थियों को मदद और सहायता उपलबध कराना।

चुनावों में कांग्रेस की भारी विजय के साथ ही, नरसिंह राव की नवनिर्मित सरकार द्वारा भारत की अफगान नीति के संदर्भ में कुछ अधिक दृढ़ निर्देश दिए गए। ग्रीष्मकाल की समाप्ति पर आईसीसीआर सांस्कृतिक शिष्टमंडल के भाग के रूप में जयपुर शैली की उत्कृष्ट कथक नृत्यांगना श्रीमती नंदिनी सिंह का काबुल में आगमन हुआ। इस संक्षिप्त दौरे तथा शानदार कार्यक्रमों ने सांस्कृतिक क्रियाकलापों के अभावों से जूझ रहे इस घेराबंदी किए गए शहर में न केवल मिशन के भीतर बल्कि भारत के मित्रों के भीतर भी उत्साह भर दिया था। सितम्बर में उपराष्ट्रपति मोहतात की दिल्ली यात्रा के दौरान, भारत ने मई 1991 में घोषित यूएनएसजी के पांच-सूत्रीय शांति प्रस्तावों का स्वागत किया और सार्वजनिक रूप से कोई राजनीतिक समाधान तैयार करने के लिए 'किसी भी प्रकार के बाहरी हस्तक्षेप' के विरुद्ध अपने पक्ष को दोहराया जिसमें 'सभी संबंधितों की वैध हितों' को ध्यान में रखने की आवश्यकता पर बल प्रदान किया गया था। भारत सरकार ने अफगानिस्तान को अपना आर्थिक सहयोग जारी रखने की प्रतिबद्धता को दोहराया जिसमें, अन्य बातों के साथ-साथ विशेषज्ञों की नियुक्ति, भारत में अध्ययन करने के लिए अफगान राष्ट्रिकों को छात्रवृत्तियां प्रदान करना और अनुदान के आधार पर अफगानिस्तान को 50,000 टन की आपूर्ति का करार भी शामिल था। आगामी दो वर्षों तक, आर्थिक सहायता प्रदान करने के हमारे प्रयासों में शामिल था - लगभग 5 करोड़ रुपए के मूल्य की शरणार्थी राहत आपूर्तियां, दवाइयां और औषधीय उपकरण जिन्हें द्विपक्षीय तौर पर तथा अफगतान शरणार्थी पुनर्वास के लिए संयुक्त राष्ट्र समन्वयक के कार्यालय (यूएनओसीए) के माध्यम से भेजा गया था।

इस दौरान, सोवियत संघ में नजीब द्वारा अनुमान लगाई गई कुछ चिंताएं उभरकर सामने आईं जब गोर्बाचेव के विरुद्ध सेना और केजीबी द्वारा किए गए विद्रोह के प्रयास से क्रेमलिन में उच्चतम स्तरों पर संशय और अव्यवस्था उत्पन्न हुई और अंतत: यह निष्फल सिद्ध हुआ। जबकि विद्रोह के इस निष्फल प्रयास ने सोवियत संघ के साम्यवादी दलों के भीतर तथा साथ ही सेना और केबीजी के भीतर भी दरार के परिणाम को उजागर किया, यह मुद्दा इतना अधिक व्यापक नहीं था जिससे गोर्बाचेव विद्रोह के प्रयास को विफल कर पाने में सफल रहे। जहां एक ओर उनका स्वयं का

प्राधिकार गंभीर रूप से प्रभावित हुआ था, वहीं सर्वाधिक आश्चर्यजनक बात यह थी कि उससे राजनीतिक विदग्धता और साहस का माहौल उत्पन्न हुआ जिसके फलस्वरूप उनके घोर राजनीतिक प्रतिद्वंद्वी बोरिस येलत्सिन को विद्यमान राजनीतिक स्थिति पर पूर्णत: प्रधानता प्राप्त हो गई और इस प्रक्रिया में स्वयं सोवियत संघ के विघटन की पृष्ठभूमि ही तैयार हो गई। येलत्सिन एक लंबे समय से सोवियत संघ की संरचना को विघटित करने तथा संघटक गणराज्यों की स्वतंत्रता प्रदान करने की बात कर रहे थे। अर्थव्यवस्था की दयनीय स्थिति को मान्यता प्रदान करते हुए उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि वे अपने देश अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं को भी समाप्त कर देंगे और अधिक व्यापक बाजार सुधारों की शुरुआत करेंगे। परंतु काबुल सरकार के लिए जो बात अत्यंत प्रतिकूल थी, वह मास्को द्वारा अफगानिस्तान को सहायता के रूप में प्रदान की जाने वाली ईंधन, खाद्य-सामग्री तथा अन्य सभी प्रकार की मदद को समाप्त कर देने का आह्वान था। सोवियत संघ से ईंधन और खाद्य आपूर्तियों को रोक दिए जाने के कारण नजीब निराशाजनक रूप से अत्यंत असहाय हो गए थे। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह था कि मास्को की ओर से प्राप्त होने वाली धनराशि उन्हें उनकी सैन्य टुकड़ियों और सेना को पोषित करने में सहायता देती थी जिसमें स्थानीय योद्धा जैसे दोस्तम भी शामिल थे और स्थिति उनके नियंत्रण में रहती थी। बिना किसी अग्रिम चर्चा के अथवा उनके लिए किसी विकल्प पर विचार किए बिना इन जीवन-रेखाओं के अकस्मात ही समाप्त कर देने से अफगान नेतृत्व अत्यंत विषम परिस्थिति और दयनीय स्थिति में उलझ गया।

1 जनवरी, 1992 से हथियारों की आपूर्ति को रोक दिए जाने की सितम्बर में की गई यूएस-यूएसएसआर की संयुक्त घोषणा भी अत्यंत चौंकने वाली सिद्ध हुई। जबकि इस करार में समस्त अफगान पक्षकारों को हथियारों की आपूर्ति को रोक देने की बात कही गई थी, इसके उपरांत केवल यही औचित्यपूर्ण अपेक्षा सामने आई कि 'युद्ध विराम तथा सभी अन्य स्रोतों से हथियारों की आपूर्ति की समाप्ति इस कदम के उपरांत क्रियान्वित की जाएगी। तब काबुल में अनेक राजनयिक धड़ों को भी यह भी स्पष्ट हो गया था कि मुजाहिद्दीन को आपूर्तियों की आपूर्ति को रोकने की ऐसी ही कोई प्रतिबद्धता केवल काल्पनिक ही होगी क्योंकि पाकिस्तान इस आशय की किसी प्रतिबद्धता को उजागर नहीं करता। इस वक्तव्य ने जिनेवा समझौते की पुन:पुष्टि कर दी तथा अफगान के लोगों के बाहर हस्तक्षेप से मुक्त होते हुए तथा अंतर-अफगान वार्ता के माध्यम से स्वयं की नियति का निर्धारण करने के अधिकार को मान्यता दी जिसके परिणामस्वरूप एक चुनावी प्रक्रिया के माध्यम से एक नई व्यापक जनाधार वाली सरकार का गठन किया जाएगा जो "अफगान राजनीतिक और इस्लामी परंपराओं का सम्मान करती हो।" इसने एक 'विश्वसनीय और निष्पक्ष' परिवर्ती तंत्र के लिए भी अस्पष्टत: आह्वान किया। इस संदर्भ में स्थिति को और भी प्रतिकूल बनाने के लिए नवम्बर में जमाइल-ए-इस्लामी मुजाहिद्दीन नेता बर्हनुद्दीन रब्बानी का मास्को में एआईजी के विदेश मंत्री के रूप में उनकी ख्यात हैसियत में स्वागत किया गया। उनकी मुलाकात के उपरांत, नए सोवियत विदेश मंत्री बोरिस पंकिन ने "एक अंतरिम इस्लाम सरकार के लिए राज्य की शक्ति के पूर्ण अंतरण के लिए आवश्यकता की पुष्टि की।" जबकि अंतरिम सरकार का संदर्भ संयुक्त राष्ट्र की योजना से दूर प्रतीत नहीं हुआ, एक इस्लामी सरकार का संदर्भ नजीब के लिए एक दु:स्वप्न ही रहा था। जैसाकि सहमति में स्पष्ट था, पाकिस्तान में हेमत्यार संयुक्त राष्ट्र शांति योजना को यह कहते हुए

अस्वीकृत करता रहा कि नजीबुल्ला शासन के अंतर्गत किसी भी समझौते को स्वीकार करने का कोई प्रश्न ही नहीं था। इन उभरती हुई आवाजों से यह भी समान रूप से स्पष्ट था कि पाकिस्तान की शासक सेना स्थापना अपनी पूर्व की योजना को तैयार रखे हुई थी जिसका उद्देश्य काबुल को बलपूर्वक कब्जे में लेना था भले ही मुजाहिद्दीन नेता संयुक्त राष्ट्र की शांति योजना के लिए तैयार हो जाएं। इस स्थिति में, अफगानिस्तान में संयुक्त राष्ट्र शांति योजना के सफल क्रियान्वयन की पूर्वसंध्या पर आईएसआई ने हेकमत्यार और अनेक अजार गैर-अफगानिस्तान समर्थकों के माध्यम से काबुल के दक्षिणी भाग तक हथियारों और लड़ाकुओं के भरे हुए सैकड़ों ट्रकों का नेतृत्व किया।

इन नई चुनौतियों के मद्देनजर स्थिति को बहाल रखने के लिए नजीब ने सक्रिय रूप से काबुल और मुजाहिद्दीन कमांडरों की परिषद के बीच और साथ ही पार्टियों के नेताओं तथा पेशावर और तेहरान में स्थित समूहों तथा यूरोप और अमेरिका में रह रहे पूर्व-सम्राट जाहिर शाह के अनुयायियों के बीच वार्ताएं प्रारंभ किया जाना प्रस्तावित किया उन्होंने समूचे देश में युद्धविराम लागू करने का प्रस्ताव दिया। न्यूयार्क में यूएनजीए में प्रधानमंत्री खालिकयार ने 'सैन्य प्रधानता' हासिल करने के लिए किसी भी पख की त्रुटि के विरुद्ध चेतावनी दी तथा 'अंतरा-अफगान वार्ता' को समर्थन दिया परंतु उन ताकतों के विरुद्ध चेतावनी दी जो देश के भीतर अफगानों की भूमिका को नकारात्मक बनाना चाहते हैं। सत्ता के प्रतिद्वंद्वियों के साथ 'प्रत्यक्ष आमने-सामने और बिना झिझक वार्ताओं' का आह्वान करते हुए, उन्होंने इन वार्ताओं को 'निष्पक्ष तीसरे पक्षों' की उपस्थिति में संचालित करने का प्रस्ताव किया तथा संयुक्त राष्ट्र अथवा अफगान समस्या में रुचि लेने वाले देशों द्वारा मध्यस्थता का सुझाव दिया।

जैसे-जैसे राजधानी में शरद ऋतु आने लगी थी, अत्यंत तनाव के माहौल के बावजूद, समूचे विश्व में घटने वाली घटनाएं हमारे सामने आने वाली थीं। मुझे स्मरण है कि मैं अयाकुत सेट्रिज और उनकी पत्नी के साथ तुर्की के मिशन में काफी समय बिताया करता था तथा वहां सोरासन क्षेत्र को जोड़ने वाले सहस्राब्दियों से विद्यमान सांस्कृतिक संबंधों पर चर्चा करता था जिसने भारत और ओटोमैन भूमि में रूमी और खुसारू जैसे किरदार उत्पन्न किए थे। हमारे मध्य ईरान द्वारा प्रभारित तेहरानियों की यदा-कदा उपस्थिति ने बौद्धिक गहनता और समृद्धि के संपूर्ण वैकल्पिक सांस्कृतिक विश्व का अनुभव प्रस्तुत किया जिसे मेरी राजनयिक तैनातियों को देखते हुए, मैंने पहले कभी नहीं महसूस किया था। अब यह ऐसा समय भी था जब भारतीय मिशन को फिल्म खुदा गवाह की शूटिंग के लिए अमिताभ बच्चन, डैनी डेंजोंग्पा और सुरेन्द्र पाल के साथ बंबई से फिल्म यूनिट के अफगानिस्तान की यात्रा की खबर प्राप्त हुई। हालांकि, हमें यह बाद में महसूस हुआ कि फिल्म का प्रस्ताव सबसे पहली बार राजीव गांधी द्वारा अपने मित्र अमिताभ बच्चन की ओर से अफगान पक्ष को प्रस्तावित किया गया था तथा उच्चतम स्तर पर नजीब द्वारा उसे स्वीकार भी किया गया था, लेकिन दु:खद बात तो यह थी कि ऐसा पूर्व प्रधानमंत्री की मृत्यु के उपरांत हुआ था। काबुल में अमिताभ बच्चन और उनके साथियों के आगमन का समाचार हमें अचानक ही प्राप्त हुआ था तथा मुझे इस अभिनेता की ओर से उसी दिन दोपहर के आस-पास हमारे निवास पर रात्रि भोज के लिए आने की पुष्टि प्राप्त हुई थी। परंतु मिशन में मेरे साथियों के उत्साह और उनकी भावना तथा मेरे रसोइए की उत्कृष्ट प्रतिभा और उसकी पहुंच के फलस्वरूप, हम अत्यंत अल्पावधि के भीतर लगभग

100 लोगों के लिए 'विशाल भोज' की व्यवस्था कर पाने में सफल रहे, जिसमें काफी नामी-गिरामी अफगानी, एक उपाध्यक्ष, कुछ मंत्री तथा राष्ट्रपति नजीबुल्ला के दो भाई (शीशन और अहमदजई) और वरिष्ठ नेतृत्व के परिवारों के कुछ युवा भी शामिल थे। अमिताभ तथा उनके साथी कलाकार हमारे प्रति काफी आभारी थे तथा वे फिल्म के लोगों के प्रति अफगान मेजबानों द्वारा दिखाई गई गर्मजोशी और सहायता के भी पर्याप्त प्रशंसक थे। मैंने उस शाम मुकुल आनंद और सुरेन्द्र पाल के साथ अपनी बातचीत का स्मरण भी किया और उन्होंने उस अवसर के बारे मे अत्यंत उत्साहजनक और हर्ष के साथ बताया तथा देश की आम जनता के साथ उनके संपर्क से हुए अनुभवों में गर्मजोशी और आतिथ्य सत्कार का उल्लेख किया। मेरे रसोइए भारत के लिए उसकी समस्त मेहनत की प्रतिपूर्ति उस समय हो गई जब उसका 'बिग-बी' के साथ एक व्यक्तिगत फोटो निकाला गया।

अप्रैल की नियति और अस्त-व्यस्तता का माहौल

संयुक्त राष्ट्र के नए महासचिव के रूप में 1 जनवरी, 1992 को कार्यभार ग्रहण करने के उपरांत यह स्वभाविक था कि बुतरस घाली ने उनकी तात्कालिक प्राथमिकताओं में से एक के रूप में अफगानिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र की योजना के क्रियान्वयन का कार्य प्रारंभ किया। अनेक बाहरी व्यक्तियों के लिए, पूर्व वर्ष के सितम्बर में वाशिंगटन और मास्को के बीच सहमत की गई 'नकारात्मक सम्मति' पर करार तेरह वर्ष पुरानी क्रूर सिविल युद्ध को समाप्त करने का एक युक्तियुक्त और प्रभावी तरीका था जिसमें लाखों लोग मारे गए थे, पचास लाख लोग विस्थापित हुए थे तथा देश पूरी तरह से तबाह और बर्बाद हो गया था। पाकिस्तान में, हालांकि संयुक्त राष्ट्र योजना को अधिकारिक रूप से समर्थित किया गया था, लेकिन कुछ धड़ों द्वारा इसे 'द्वितीय श्रेष्ठ विकल्प' के रूप में मानने से, यह स्पष्ट था कि काबुल के विरुद्ध निरंतर संघर्ष के विकल्प का अधिकारिक पदानुक्रम में प्रभावशाली वर्गों द्वारा दृढ़तापूर्वक समर्थन किया जा रहा था। पेशावर में अनेक विद्रोही धड़े भी अस्पष्ट बने हुए थे, केवल राजनीतिक कारणों से ही नहीं बल्कि रणनीतिक कारणों से भी कि किस प्रकार वे भू-भाग पर नियंत्रण के लिए आसन्न युद्ध में स्वयं का पक्ष रखेंगे।

अब संयुक्त राष्ट्र स्वयं को अपने पांच-सूत्रीय कार्यक्रम के क्रियान्वयन के विवरणों की कार्यवाही करने के दबाव में महसूस कर रहा था तथा उसे यह भी स्पष्ट करना था कि किस प्रकार वे इस संक्रमणकाल को प्रबंधित करेंगे। वर्ष के प्रारंभ में, बेनन सेवान ने न्यूयार्क, इस्लामाबाद, पेशावर, काबुल और तेहरान के बीच राजनयिकता के दांव-पेंच आरंभ कर दिए। उनकी काबुल की यात्राओं में, मैं अधिकांशत: उनके कॉलरों की सूची में शामिल था परंतु वे इस बात से सतर्क थे कि वे महासचिव के दृष्टिकोण के बारे में अधिक चिंता व्यक्त न करें। लेकिन, कुछ बातें बिल्कुल स्पष्ट थीं। जबकि संयुक्त राष्ट्र की योजना ने एक 'व्यापक आधार वाली सरकार' का आह्वान किया था, नवम्बर, 1991 में मास्को में विदेश मंत्री पांकिन के वक्तव्य ने 'अंतरिम इस्लामी सरकार' का उल्लेख किया था। यह निरंतर स्पष्ट बनाटा जा रहा था कि बेनन के लिए पहला कदम नजीब को काबुल में सत्ता पर अपनी पकड़ को ढीला करने के लिए राजी करना था। ऐसा करने में, बेनन ने यह महसूस किया कि सबसे पहले तो अपनी रणनीति बदलते हुए नजीब को अपनी सत्ता किसी विस्तृत गठबंधन को सौंपने के लिए मनाना होगा क्योंकि उनकी सत्ता अभी तक अस्थिर रही थी तथा वे त्यागपत्र दे दें और एक

अंतरिम प्राधिकारी को सौंप दें। जबकि नजीब सत्ता में बने रहने की अपनी स्वयं की सीमित संभावनाओं के बारे में यथार्थवादी बने हुए थे, वे इस बात को लेकर हठी थे कि वे मुजाहिद्दीन के अधीन नहीं रहेंगे। उनका प्रयास यह था कि वे देश के भीतर विद्यमान अवयवों सहित किसी विशाल आधार वाली सरकार को सहारा देने के लिए संयुक्त राष्ट्र का प्रयोग करें जिनमें प्रवासी व्यक्ति और पेशावर एआईजी से सौम्य अवयव भी शामिल हो जिनके साथ वे पहले से ही संपर्क में हैं। उन्होंने सत्ता सौंपने की स्थिति में अपने साथियों के लिए सुरक्षा और संरक्षा के साथ स्थिर संक्रमण की अंतर्राष्ट्रीय गारंटियों की भी मांग की। जैसा कि जनरल तोखी ने मुझे बताया था, नजीब इतने अधिक देशभक्त थे कि वे सत्ता हस्तांतरण के दृष्टिगत संशय और अस्थिरता की अनुमति नहीं दे सकते थे।

18 मार्च, 1992 को, बेनन सेवान के साथ गहन विचार-विमर्श के बाद अफगानिस्तान के राष्ट्रपति ने एक वक्तव्य दिया जिसमें उन्होंने महासचिव के प्रयासों के लिए अपनी सरकार के पूर्ण समर्थन का आश्वासन दिया और घोषणा कि कि वे "संयुक्त राष्ट्र की शांति प्रक्रिया के महासचिव द्वारा आयोजित अफगान लोगों के प्रस्तावित एकत्रीकरण में मेरी वैयक्तिक प्रतिभागिता पर बल प्रदान नहीं करेंगे।" उन्होंने इस बात की सहमति भी व्यक्त की कि एक बार काबुल में अंतरिम सरकार की स्थापना के लिए संयुक्त राष्ट्र प्रक्रिया के माध्यम से आपसी सहमति बन जाने पर "समस्त शक्तियां और सभी कार्यकारी प्राधिकारी अंतरिम सरकार को अंतरित कर दिए जाएंगे। यह वक्तव्य उसी दिन विदेश मंत्री अब्दुल वकील के पत्र से न्यूयार्क में अफगान मिशन द्वारा महासचिव को सौंप दिया गया तथा इसे 20 मार्च, 1992 में संयुक्त राष्ट्र के अधिकारिक दस्तावेज में जारी किया गया।

देश के भीतर, नजीब के घोषणा ने चेतावनी की घंटियां बजा दीं। उत्तर में, दोस्तम ने, जो सर्दियों के माहों में किसी ऐसी पठान अधिकृत अंतरिम प्राधिकारी का विरोध करने के लिए किसी ढले गठबंधन का सुझाव लेकर अहमदशाह मसूस तक पहुंचा था जो काबुल में अभ्युदय हो सके, अब अतिरिक्त प्रयासों के तौर पर हिजबे - वाहदत और सैयद मसूद नदेरी को मनाने का प्रयास कर दिया था जिसमें इन चिंताओं की पुनरावृत्ति हो रही थी। इसी दौरान, मार्च की समाप्ति तक, उसने मजार-ए-शरीफ में घेराबंदी कर ली थी तथा एक राष्ट्रीय इस्लामी आंदोलन अथवा जंबिश-ए-मिली इस्लामी की घोषणा कर दी। काबुल से, कुछ पठान अधिकारी हिकमत्यार और अबू सय्यफ के साथ जुड़ने के लिए दक्षिण की ओर गए जबकि ताजिक सेना अधिकारियों ने मसूद की आगे बढ़ती सेनाओं से मिलने का फैसला किया जिसने यह दर्शाया क वे अपनी निष्ठा में परिवर्तन कर रहे थे। इस बात की संभावनाएं भी व्यक्त की जा रही थी कि वतन पार्टी के शीर्ष नेता और सेना के कमांडर जैसे नबी अजीमी और मोहम्मद आसिफ दिलावर मसूद के संपर्क में थे। अब्दुल वकील के साथ-साथ इनमें से कुछ संपर्क नजीब की जानकारी में किए जा रहे थे तथा इनका आशय काबुल में किसी भी आसन्न बमबारी का निवारण करना था जिससे कि वहां नागरिक जीवन प्रभावित न होने पाए। परंतु यह प्रतीत हो रहा था कि प्रत्येक नेता अपना ही निजी हित साध रहा था। इस दौरान मार्च की समाप्ति तक, फातमा नजीब अपनी माता और छोटे-छोटे बच्चों के साथ चुपचाप काबुल से दिल्ली चली गई जहां उसने अपनी बहन लैला के घर पर शरण ली जिसके पति भारत में राजदूत थे।

10 अप्रैल को महासचिव बुतरस घाली ने जिनेवा में एक वक्तव्य जारी किया जिसमें अफगान समाज के विभिन्न धड़ों के मध्य राजनीतिक समझ को आगे बढ़ाने के बेनन के प्रयासों में हुई प्रगति का वर्णन किया गया था। अब उन्होंने निष्पक्ष व्यक्तियों की 'संक्रमण-पूर्व परिषद' की स्थापना की आवश्यकता पर बल प्रदान किया जिसे सभी शक्तियां और कार्यकारी प्राधिकार सौंपे जा सकते हों। उन्होंने कहा कि एक बार इस निकाय के स्थापित हो जाने और उसे शक्तियां सौंप दिए जाने पर उन्हें आशा है कि वैमनस्य में कमी आएगी, आम माफी की घोषणा होगी, सभी अफगानों की सुरक्षा और संरक्षा की गारंटी दी जाएगी, मानवाधिकारों का सम्मान होगा, संपत्ति की गारंटी दी जाएगी, संपत्ति की सुरक्षा होगी, वाणिज्यिक मार्ग खुलेंगे आदि। पश्च ओर से प्रक्रिया को देखते हुए, यह देखा जा सकता था कि जबकि प्रक्रिया अपनी समाप्ति की ओर बढ़ रही थी, लेकिन संयुक्त राष्ट्र ने ऐसी किसी योजना पर विचार नहीं किया था जिसके द्वारा किसी भी पक्ष की ओर से की जाने वाली दुर्भावना का विरोध किया जा सके। जब नजीब ने धरातल पर संयुक्त राष्ट्र प्रवर्तन क्षमता की किसी योजना की आवश्यकता का सुझाव दिया, तो समय-सीमा को ध्यान में रखते हुए उसे अनौचित्यपूर्ण करार करते हुए खारिज कर दिया गया। लेकिन, उस समय बेनन को सुझाए गए सामान्य समीकरण का अर्थ नजीब का त्यागपत्र दिया जाना था जिसके उपरांत सेना के भीतर सैन्य परिषद का गठन किया जाता और उसके उपरांत किसी संक्रमण-पूर्व परिशद को कार्यकारी शक्तियों का हस्तांतरण किया जाता।

12 और 13 अप्रैल, 1992 को बेनन की काबुल यात्रा के दौरान, मैं उनसे नहीं मिला। परंतु 15 अप्रैल की शाम को मुझे तोखी द्वारा अपने कार्यालय बुलाया गया और नजीब के इस निर्णय की सूचना दी गई कि उन्होंने संयुक्त राष्ट्र द्वारा उनकी यात्रा की व्यवस्था किए जाने पर काबुल छोड़ने का मन बना लिया है, जोकि संभवत: उसी रात्रि किया जाना था। इसके तुरंत पश्चात् रात्रि लगभग 10 बजे, नजीब ने व्यक्तिगत रूप से टेलीफोन करते हुए मुझे संयुक्त राष्ट्र द्वारा पहले ही गई व्यवस्थाओं के लिए आभार व्यक्त किया जिसके तहत उन्हें प्रथम पड़ाव के रूप में दिल्ली ले जाया जाना था। उन्होंने यह निर्णय नहं किया था कि वे वहां से किधर जाएंगे। यह बात उन्हें स्पष्ट थी कि हालांकि उनका अपना परिवार दिल्ली में अफगान निवास पर राजदूत सरवर के साथ रह रहा था, लेकिन इस स्थिति में परिवर्तन होना संभव था। वे भारतीय नेताओं द्वारा दिखाई गई समझ के लिए आभारी थे, परंतु किसी भी समय उन्होंने भारत में स्वयं के लिए शरण का कोई प्रश्न नहीं उठाया। जबकि मेरे लिए उस रात कुछ भी कर पाना संभव नहीं था, मैंने दिल्ली को इस घटनाक्रम के बारे में सूचित किया तथा राष्ट्रपति की अगली सुबह दिल्ली में सुरक्षित आगमन की सूचना प्राप्त होने की बेचैनी के साथ प्रतीक्षा की।

---

[3] देखिए फिलिप कोरविन : डूम्ड इन अफगानिस्तान : ए यू.एन. ऑफिसर्स मेमोइर ऑफ दि फॉल ऑफ काबुल एंड नजीबुल्लाज़ फेल्ड एस्केप, 1992 (मैं कोर्विन से नहीं मिला। उन्होंने एक नियमित राजदूत के स्थान पर भारतीय सीडीए का उल्लेख किया है। यह प्रतीत होता है कि वह इस बात से अनजान थे कि मैंने बेनन सेवान के अनुराध पर नियमित रूप से उनसे मुलाकात की थी। मै अवनी बोत्साली के संपर्क में भी था। मैं समझता हूं कि उनके कुछ तथ्यों की भिन्न रूप से व्याख्या की गई है हालांकि, कुल मिलाकर वे विश्वसनीय थे।

मैं सुबह जल्दी उठा करता था लेकिन अगली सुबह यूएन-ओएसजीएपी के एक फोन कॉल से मेरी आंख प्रात: 3.30 बजे ही खुल गई जिसने मुझे सूचित किया कि डा. नजीबुल्ला मुझसे बात करना चाहते हैं। कुछ ही मिनटों में नजीब लाइन पर आ गए और उन्होंने मुझे अत्यंत धीमी, सुस्त और फीकी आवाज में सूचित किया कि 'असाधारण परिस्थितियों' के कारण उनका योजनाबद्ध प्रस्थान नहीं हो सकता है तथा उन्हें उस समय संयुक्त राष्ट्र के परिसर में रखा गया है। मैंने उनसे पूछा कि क्या मैं उनसे मिल सकता हूं। इस पर उन्होंने मुझसे मिलने की आशा जताई। मैं आधे घंटे के भीतर ही संयुक्त राष्ट्र परिसर में पहुंचने में सफल रहा तथा सीधे नजीब, अहमदजई और तोखी से भेंट की। अपनी प्रत्यक्ष चुप्पी के बावजूद डाक्टर साहब और तोखी मुझे घटनाक्रम का स्पष्ट वर्णन करने में समर्थ रहे तथा मुझे उनके द्वारा महसूस किए जाने वाले तनाव का स्पष्टत: अनुभव हो रहा था। कुछ क्षणों की चुप्पी तथा संयुक्त राष्ट्र के कुछ मध्य स्तरीय अधिकारियों की उपस्थिति में विद्यमान तनाव के बीच हमें आश्वासन दिया गया कि बेनन सेवान भी इसी परिसर में हैं और शीघ्र ही हमसे मिलेंगे। बेनन के आगमन पर हम समग्र स्थिति पर नए सिरे से विचार करने के लिए साथ बैठे। स्थिति को संक्षिप्त रूप से समझने के उपरांत, तत्काल ही उन्होंने पूछा कि क्या भारत नजीब को शरण देने के प्रस्ताव पर विचार कर सकता है। मैं इस प्रकार सीधे-सीधे अनुरोध किए जाने पर चकित रह गया परंतु मैंने कहा कि इस प्रस्ताव पर भारत सरकार द्वारा विचार किए जाने की आवश्यकता होगी और कहा कि क्या संयुक्त राष्ट्र इस बारे में हमें कोई विशेष अनुरोध कर रहा है। उन्होंने कहा कि वे औपचारिक अनुरोध करने के लिए तैयार हैं। मैंने कहा कि मैं ऐसा अनुरोध तत्काल ही दिल्ली भेज दूंगा। बेनन इस बात को जानबूझकर अस्पष्ट बनाए हुए थे कि क्या शरण लेने के लिए अनुरोध में राष्ट्रपति को तत्काल ही ओएसजीएपी परिसर से भारत निवास ले जाया जाना शामिल था अथवा क्या उसमें भारत में उनका स्वागत करने का प्रस्ताव शामिल किया जाना था। मेरे मन में अधिक संदेह नहीं था तथा वस्तुत: हमारी पूर्व-वार्ताओं में नजीब ने भी यह विशेष रूप से स्पष्ट कर दिया था कि उन्हें संयुक्त राष्ट्र के परिसर से तब तक कहीं और स्थानांतरित होने में कम रुचि है अथवा ऐसी मर्जी नहीं है जब तक कि उन्हें देश से ही बाहर न जाना पड़ता हो। उस समय ऐसी विशेष रूप से स्थिति बन गई थी क्योंकि अब वे देश में किसी पद पर आसीन नहीं थे। उन्होंने मुझे स्पष्ट रूप से कहा था कि अब उनकी सुरक्षा और संरक्षा का उत्तरदायित्व पूरी तरह से संयुक्त राष्ट्र पर है क्योंकि उनके द्वारा की गई समस्त कार्यवाहियां संयुक्त राष्ट्र की योजना तथा महासचिव और उनके विशेष सलाहकार के साथ तय की गई समझ के अनुसार ही संचालित की गई हैं। इस स्थिति में, मैं दिल्ली में विदेश मंत्रालय के साथ तत्काल वार्ता कर पाने में सफल रहा और मुझे बिना किसी विलंब के विदेश सचिव दीक्षित के उत्तर से अवगत कराया गया कि "पूर्व राष्ट्रपति के लिए शरण प्रदान करने पर विचार करना वर्तमान स्थिति में भारत सरकार के लिए उचित नहीं होगा।" मेरी अपनी जानकारी के लिए, मुझे यह बताया गया कि यदि नजीब पहले ही भारत के लिए निकल चुके हैं अथवा भारतीय धरती पर पहुंच चुके हैं, तो तब स्थिति कुछ भिन्न हो सकती है। यह हमारी सुविचारित राय थी कि उनकी सुरक्षा भारतीय राजनयिक परिसरों में किसी अन्यत्र स्थान की तुलना में संयुक्त राष्ट्र परिसर में अधिक पुख्ता थी तथा हम इस बात से भी आश्वासित थे कि हमारी किसी भी संपत्ति में उनकी उपस्थिति अफगानिस्तान के भीतर हमारे कार्यकरण को दुष्कर बना

देगी। हालांकि हम इस अफगान परंपरा से भी अवगत थे कि उस प्रत्येक व्यक्ति को संरक्षण प्रदान किया जाए जिसने उनके घर में शरण ली है, मैं व्यक्तिगत रूप से आश्वस्त नहीं था कि इसे भारतीय निवास के मामले में भी लागू माना जाएगा। मुझे इस बात का डर था कि यह हेकमत्यार के संगठन के लोगों द्वारा खेली गई 'चाल' थी। हमारे द्वारा स्थानीय स्तर पर की गई कोई भी कार्यवाही भारत के मुजाहिद्दीन संगठनों के साथ पहले से ही विद्यमान प्रतिकूल संबंधों में और कटुता ला सकती थी जिनके साथ हमें भविष्य के लिए स्थायी संबंधी तत्काल ही स्थापित करने की आवश्यकता थी।

अगले कुछ दिनों में, हालांकि बेनन सेवान ने नजीब को संयुक्त राष्ट्र परिसर से बाहर निकलने तथा किसी अन्य सुरक्षित स्थान पर ले जाने के लिए अपने ओर से कठिन प्रयास किए, साथ ही वे काबुल में अस्थायी सरकार के साथ अथवा मुजाहिद्दीन संगठनों के साथ किसी भी टकराव को टालने के लिए समग्र रूप से सतर्क थे, जो शहर के द्वार पर विद्यमान थे क्योंकि संयुक्त राष्ट्र तत्कालीन तानाशाही की भावना को देश से बाहर निकालने के लिए प्रतिबद्ध था। तथ्य यह था कि ऐसा कोई कदम उस सौदे का भाग था जो देश के भीतर और देश के बाहर पहले से ही ज्ञात था तथा जिसे एक स्थायी स्थानांतरण सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण माना जाता था। जब हमें वस्तुत: कार्यवाही करने के लिए कहा गया, तो तथाकथित संक्रमण-पूर्व दल काबुल जाने के लिए तैयार नहीं था। फिर भी, बेनन नजीब को देश से बाहर ले जा पाने में समर्थ हो गए होते, तो संयुक्त राष्ट्र उस स्थिति में एक स्थिर संक्रमण के लिए श्रेय का दावा कर पाने में समर्थ हो जाता, यदि विभिन्न मुजाहिद्दीन सेनाएं राजधानी में जबर्दस्ती घुस जाती, जैसा कि वास्तव में ही हुआ और वे शक्ति के एक संहारक संघर्ष के दुष्चक्र में शामिल थे। यह केवल दोस्तम की अंतिम समझ में की गई कार्रवाई थी जिसका उद्देश्य उसे एक ऐसी स्थानीय मजबूती प्रदान करना था जिसने संयुक्त राष्ट्र की योजना को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया। फिर भी, यदि बेनन पहले संयुक्त राष्ट्र विमान में काबुल आ जाते और अपने साथ नजीब को लेकर हवाई-अड्डे आते, तो दोस्तम अथवा अजीजी के प्राधिकार द्वारा उन्हें चुनौती देने की संभावनाएं उत्पन्न नहीं होती। कारों के काफिले में किसी वरिष्ठ संयुक्त राष्ट्र पदाधिकारी की अनुपस्थिति और किसी 'दूसरी योजना' का अभाव संयुक्त राष्ट्र की योजना की एक बड़ी त्रुटि थी। वस्तुत: उसी सुबह नजीब के सुरक्षा प्रमुख गुलाम फारूख याकूबी द्वारा आत्महत्या करने की अफवाह ने भी उस समय काफी संशय की स्थिति उत्पन्न की थी क्योंकि कुछ राजनीतिक यह संदेह भी व्यक्त कर रहे थे कि यह आत्महत्या का मामला नहीं है। अनेक लोगों का मानना था कि याकूबी को नजीब की उड़ान में गतिरोध उत्पन्न करने के लिए संभवत: अजीमी द्वारा मार डाला गया है जिसने उस उड़ान के बारे में पता लगा दिया था, हवाई-अड्डे को बंद करने का आदेश दिया था और दोस्तम के साथ मिलकर हवाई-अड्डे की सुरक्षा के अंतिम चरण का पासवर्ड बदल दिया था। परंतु बेनन ने केवल कुछ दिन पूर्व ही अजीमी के साथ स्थानांतरण की योजना पर चर्चा की थी। इस संशय के बावजूद, कुछ विवरण परस्पर-विरोधी प्रतीत हुए तथा केवल संयुक्त राष्ट्र की विफलता के लिए एकमात्र स्पष्टीकरण इस समीकरण में एक मुख्य किरदार द्वारा की गई गद्दारी हो सकता है। अधिकांश प्रेक्षकों की नज़र में, यह मुख्य किरदार दोस्तम था। इस दौरान, नजीब की उड़ान के बारे में विदेश मंत्री वकील और अन्य की शिकायतों में अत्यंत कम सच्चाई

प्रतीत होती थी। इसी प्रकार, पाकिस्तान द्वारा शरण का प्रस्ताव भी संशयपूर्ण और असत्य था। नजीब भी इस विचार का विरोध करते थे तथा बेनन द्वारा भी इसे तत्काल ही अस्वीकृत कर दिया गया। इस स्थिति में, संयुक्त राष्ट्र केवल एक ईमानदार और व्यवहार्य अपनाने पर विवश हुआ जोकि यह था कि सभी संभव विकल्पों पर कार्य करते हुए उन्हें अपने परिसर में रखा जाए।

आगामी दिनों में, अब्दुल रहीम हतीफ के नेतृत्व में एक अस्थायी सरकार ने सामान्य रूप से कार्य किया परंतु इसका मुख्य प्रचालक जनरल नबी अजीजी ही था। हालांकि मसूद को काबुल आने के लिए आमंत्रित किया गया था, वह ऐसा करने के लिए अनिच्छुक था, उसकी अनुपस्थिति में एक राजनीतिक समाधान तैयार किया तथा उस पर पेशावर में सभी दलों द्वारा सहमति व्यक्त की गई। परंतु वह बल द्वारा सत्ता कब्जाने से किसी अन्य मुजाहिद्दीन नेता को दूर रखने के लिए दृढ़ संकल्प था। जैसे-जैसे राजधानी में सुरक्षा की स्थिति निरंतर तनावपूर्ण होती रही, हेकमत्यार ने इसे काबुल पर कब्जा जमाने की उसकी दीर्घकालिक योजना को अमल में लाने का एक अन्य अवसर माना। हालांकि सेवाओं में परस्पर संघर्ष की अफवाहें निरंतर राजधानी में प्राप्त हो रही थीं, हम उस समय तक हेकमत्यार की इस धमकी कि 'अपनी नंगी तलवारों के साथ काबुल में प्रवेश करो' से बिल्कुल अनभिज्ञ थे। हेकमत्यार और मसूद के बीच टेलीफोन पर नाटकीय बहस की रिपोर्टें भी हमें ज्ञात नहीं थीं।[4]

24 अप्रैल, 1992 को हस्ताक्षरित पेशावर करार ने नजीबुल्ला सरकार को हटाने के लिए एक अफगानिस्तान इस्लामी राज्य की स्थापना की। इस सरकार का नेतृत्व सर्वोच्च नेतृत्व परिषद द्वारा किया गया था जिसके प्रमुख सेबगतुल्ला मोजाद्देदी थे जिन्होंने दो माह की अवधि के लिए प्रभार संभाला था। मसूद को रक्षा मंत्री नियुक्त किया गया था तथा हेकमत्यार को प्रधानमंत्री के रूप में कार्य करने के लिए आमंत्रित किया गया था। परंतु हेकमत्यार ने समझौते पर हस्ताक्षर करने से इंकार कर दिया। हालांकि उन्होंने हरकद-इंकलाब-ए-इस्लामी और खली धड़े जैसे संगठनों से अपील की थी कि वे उनके समर्थन में आ जाएं लेकिन इन संगठनों ने यह बात नहीं मानी और उन्होंने पेशावर समझौते का समर्थन करने को ही वरीयता दी। हज्ब सेनाएं दक्षिण और पश्चिम की ओर से शहर में घुस गईं परंतु उन्हें शीघ्र ही वापस धकेल दिया गया। उत्तर की ओर से जमीएल और शूरा-ए-नज़र ने शहर में प्रवेश किया। इस दौरान, मोजाद्देदी ने शहर में सुरक्षा व्यवस्था चुस्त होने का दिखावा किया। कार्यवाही सरकार की ओर से अब्दुल वकील ने इस बात से प्रसन्नता व्यक्त की कि विरोधी मुजाहिद्दीन धड़े परिवर्तन के लिए संयुक्त राष्ट्र के प्रयासों का समर्थन करने के लिए सहमत हो गए हैं और आशा व्यक्त की कि इससे युद्ध विराम होगा जो काबुल के लोगों के लिए सुरक्षा और संरक्षा लेकर आएगा। परंतु यह तथ्य उस बात से बिल्कुल भिन्न था जिसकी सशस्त्र समूह तैयारी कर रहे थे। 27 अप्रैल को अन्य प्रमुख दलों जैसे जुबिश-ए-मिली, हिज्ब वाहदत, इत्तिहाद और हरकत ने भी शहर में प्रवेश कर लिया। हालांकि काबुल पेशावर करार के अंतर्गत कार्य कर रहे समूहों के नियंत्रण के अधीन था, इस स्थिति को स्थिर नहीं माना जा सकता था। राजधानी से बाहर धकेल दिए जाने पर, हेकमत्यार की हेज्बे इस्लामी ने अपनी सेनाओं को तोपें दागने की परिधि में ही रखा तथा वे

[4] https://en.wikipedia.org/wiki/Battle_of_Kabul (1992-96)

कुछ ही दिनों के भीतर राजधानी के केन्द्रीय जिलों पर गंभीर बमबारी कर पाने में समर्थ थे। इस दौरान, काबुल के मध्यक में विभिन्न धड़ों के मुजाहिद्दीन दस्तों के विद्यमान रहने से, जिनमें कुछ दिन पूर्व ही पुली-चखरी जेल से रिहा हुए अपराधी भी शामिल थे, शहर की शांति का माहौल अस्त-व्यस्तता और राजतंत्र में परिवर्तित होने लगा था।

इस दौरान, जनवरी में रूस के राजदूत पस्तुखोन के जाने तथा उनके स्थान पर राजदूत एवगेनी ओस्जावेको के आने से, तथा अन्य वरिष्ठ पूर्वी यूरोपीय राजदूतों के मध्य मुझे डीन के रूप में काबुल ने छोटे राजनयिक समुदाय के बीच अति महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व सौंपा गया और साथ ही मुझे राजधानी में राजनयिक व्यक्तियों की सुरक्षा और संरक्षा के लिए कोर का प्रवक्ता भी बनाया गया। मुजाहिद्दीन गुटों के सड़क मार्ग से आगमन के दौरान, मुझे स्मरण है कि मैं 28 अप्रैल को डीन के रूप में अन्य राजनयिकों के साथ हवाई-अड्डे गया जहां मुझे उस विमान के आगमन के दौरान उपस्थित रहना था जिसमें मुजाहिद्दीन के नेता आ रहे थे और साथ ही पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ, सउदी आसूचना प्रमुख तुर्की-अल-फैसल(मैं स्मरण करने का प्रयास करता हूं परंतु अभी भी मुझे स्पष्ट नहीं है कि क्या उस दल में जनरल जावेद नसर भी शामिल थे) तथा बीजिंग और न्यूयार्क के दिनों से मेरे पुराने मित्र रियाज मोहम्मद खान भी शामिल थे, जो उस समय अफगान मामलों के महासचिव थे। हालांकि, डीन होने के नाते मैं अन्य राजनयिकों के साथ बेहतर संपर्क में रहा था, अत: मैं घटनाक्रमों की ताजा जानकारी रखता था और मिशन में मेरे साथियों और स्वयं के लिए यह एक अत्यंत दुष्कर उत्तरदायित्व भी था क्योंकि समूचे शहर में विद्रोही लड़ाकों की उग्र भीड़ के बीच इस बारे में अत्यंत कम जानकारी होती थी कि राजनयिकों के साथ किस प्रकार व्यवहार करना है। हमारा पहला कदम राजनयिकों को यह चेतावनी देना था कि वे घरों के भीतर ही रहें और शहर में जितना संभव हो उतना कम जाएं। जब कभी वे बाहर जाते भी थे तो उन्हें यह सुनिश्चित करना था कि उन्हें किसी न किसी रूप में सुरक्षा मुहैया हो अथवा उनके साथ ही सुरक्षाकर्मी तथा वे वे हर समय अपने लोगों को और साथ ही अन्य मिशनों को भी अपनी गतिविधि के बारे में निरंतर सूचित करते रहें। हालांकि भारतीय मिशन के कर्मियों की संख्या अत्यंत कम थी, फिर भी उसमें लगभग 16 सदस्य थे जिनमें सुरक्षा कर्मी भी सम्मिलित थे। चूंकि मिशन में केवल एक ही चालक था, मुझे प्राय: अपनी अधिकारिक कार को स्वयं ही चलाना पड़ता था और एक अवसर विशेष पर, जब हवाई हड्डे पर प्रस्थान करने वाले कर्मियों को विदा करने के उपरांत मैं अपनी अधिकारिक कार खुद ही चला रहा था, चांसलरी की ओर लौटते समय सहर-ए-हनऊ में आंतरिक मंत्रालय के समीप रास्ता बदल दिया गया और मुझे अन्य मार्ग से घूमकर जाना पड़ा। यह स्थान चांसलरी से काफी नजदीक था और रेडियो (वाकी-टॉकी) से मैं अपने साथियों के संपर्क में था, परंतु कुछ ही मिनटों पश्चात् मैंने सवयं को एक पूर्णत: भिन्न परिवेश में और ट्रैफिक जाम में पाया जहां जॉजजानी लड़ाकुओं के बीच गोलीबारी हो रही थी। हालांकि, मैं उस युद्धनुमा स्थल से कुछ दूरी पर था, मुझे एक लड़ाके द्वारा घेर लिया गया और कार से उतरने को कहा गया। मैं घबरा गया था तथा इसबात को लेकर चिंतित था कि वे संभवत: उसकी मंशा मेरी झंडा लगी कार को अपने कब्जे में कर लेने की है। हालांकि मैं डरा हुआ था, मैंने दरवाजा तो खोला परंतु मैंने बाहर निकलने से इंकार कर दिया और 'सफीर, सफीर' चिल्लाता रहा और अपना पहचान-पत्र दिखाया। उस व्यक्ति का शक समाप्त होता

प्रतीत नहीं हो रहा था तथा मैंने तत्काल ही भांप लिया कि मैं जीवन के जोखिम की स्थिति का सामना कर रहा हूं। मेरे भाग्य से वह युवा लड़ाकू मेरी औपचारिक वेशभूषा से प्रभावित होता प्रतीत हुआ तथा उसने मुझे वहां से सुरक्षित निकल जाने का संकेत कर दिया। यह ऐसी घटना थी जिसकी कभी भी पुनरावृत्ति नहीं हुई थी, और हालांकि मिशन में मेरे साथियों ने स्वयं को उस खतरे में डालने के लिए काफी डांटा-डपटा भी था, लेकिन मैंने व्यक्तिगत रूप से एक सबक भी सीखा था। आने वाले समय में, मुजाहिद्दीन लड़ाकुओं ने अन्य साधारण वाहनों की तुलना में राजनयिक वाहनों की पहचान करने के लिए चिह्नों और उनके नम्बरों के विषय में अधिक जानकारी हासिल कर ली थी।

मोजाद्देदी ने नेतृत्व वाली अंतरिम सरकार पेशावर समझौते के अनुरूप मुजाहिद्दीन बलों को साथ रखने में निराशाजनक रूप से असमर्थ सिद्ध हुई। हेकमत्यार काबुल से दोस्तम की सेनाओं की वापसी की अपनी मांग पर अड़े रहे। हिज्ब इस्लामी सेनाओं ने 25 मई के सरकार के शांति के प्रस्ताव के एक सप्ताह के भीतर राष्ट्रपति मोजोद्देदी को ले जा रहे विमान को गिराने का प्रयास किया, तो यह घटना काबुल पर नियंत्रण करने के लिए गठबंधन की आखिरी गलती साबित हुई। 30 मई, 1992 के बाद की अवधि में शहर के दक्षिणी भाग में जुंबिश-ए-मिली और हिज्ब इस्लामी सेनाओं के बीच अत्यंत भयानक संघर्ष छिड़ा जिसमें दोनों पक्षों द्वारा भारी गोला-बारूद और रॉकेटों का प्रयोग किया गया जिससे अनेक नागरिक मारे गए तथा घायल हुए। आंतरिक मंत्रालय के इलाके में भी भीषण लड़ाई हुई जो भारतीय चांसलरी के निकट था। उस समय तक मिशन के समस्त कार्मिक चांसलरी में चले गए थे तथा हमें अनेक दिनों तक अपनी सुरक्षा के लिए स्वयं को चांसलरी के भूतल में छिपाकर रखना पड़ा था। बमबारी न होने की अवधि के दौरान, मैं समय-समय पर विदेश मंत्रालय का दौरा कर लिया करता था, जो उस समय राज्य मंत्री हामिद कर्जई के प्रभावी नेतृत्व के अंतर्गत था। हमारी बैठकें सौहार्दपूर्ण थीं तथा वे भारत के साथ अपने संबंधों के विषय में सीधे और बिना लाग-लपेट के बोला करते थे। वस्तुत: एक से अधिक अवसरों पर, उन्होंने मुझे राष्ट्रपति मोजोद्देदी से भेंट कराने के लिए ले जाने की पहल की जिन्होंने मोजाद्देदों के 'सरहिंद संबंधों' के बारे में गर्मजोशी के साथ बताया तथा भारत के प्रति उनके आध्यात्मिक ऋण का उल्लेख किया। तथापि दोनों ही नेता इन गृह-विरही टिप्पणियों को संतुलित करने के प्रति काफी सतर्क थे जिसमें उन्होंने भारत में क्रमिक सरकारों द्वारा नजीबुल्ला की 'साम्यवादी' सरकार को समर्थन देने तथा मुजाहिद्दीन सशस्त्र संगठनों के साथ संबंध स्थापित करने की अनिच्छा व्यक्त करने की अनुचित राजनीति पर खेद भी व्यक्त किया। कर्जई ने यह भी सुझाव दिया कि भारत ने यह गलत ही अनुमान लगाया है कि अमेरिकी और पाकिस्तानी सहयोग एवं सहायता पर मुजाहिद्दीन समूहों की आश्रिता ने उन्हें इन शक्तियों का गुलाम बना दिया है और वे अफगानिस्तान में स्वतंत्र नीतियों का पालन करने में असमर्थ हो गए हैं। भविष्य की ओर देखते हुए कर्जई ने मुझे भारत के साथ सुदृढ़ संबंध बनाने की काबुल की इच्छा का आश्वासन दिया तथा देश की तात्कालिक आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए हमारी सहायता मांगी।

दो माह पश्चात् मोजाद्देदी की सरकार ने जमाएत नेतृत्व को सत्ता सौंप देने का दबाव महसूस किया जिसके तहत बरहनुद्दीन रब्बानी ने राष्ट्रपति के रूप में कार्यभार ग्रहण करना था तथा प्रभावी नेतृत्व मसूद द्वारा प्रदान किया जाना था। विदेश कार्यालय का कार्यभार राज्य मंत्री कर्जई से

लेकर नजीबुल्ला लफरई को सोंप दिया गया तथा सलमान गेलानी ने विदेश मंत्री का पद संभाला। अनेक जमाएत मंत्री जैसे डा. अब्दुल रहमान, नागर विमानन मंत्री अपने संबंधित विभागों में ही रहे। नागर विमानन मंत्रालय के साथ हमारे संबंध घनिष्ठ बने रहे जो नजीबुल्ला सरकार के अंतर्गत तर्जई और वादिर सफी से लेकर मुजाहिद्दीन सरकारों के अंतर्गत डा. अब्दुल रहमान तक पर्याप्त सुदृढ़ रहे जिसका प्रमुख कारण एरियाना और एयर इंडिया द्वारा अनुरक्षित दिल्ली-काबुल हवाई संपर्क पर हमारी पर्याप्त निर्भरता थी। यह संबंध शहर के बाहरी इलाकों से होने वाली निरंतर बमबारी और साथ ही दोनों एयरलाइनों द्वारा महसूस की जाने वाली आपूर्तियों और कल पुर्जों की पर्याप्त कमी द्वारा कारित गंभीर तनाव के अध्यधीन था। अप्रैल, 1992 की समाप्ति से लेकर सितम्बर के अंत तक, दिल्ली और काबुल के बीच नियमित वाणिज्यिक उड़ानें बंद रहीं और उसके साथ दिल्ली के साथ हमारे संबंध भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुए। विदेश मंत्रालय के साथ संपर्क केवल उधार पर लिए गए उपग्रह फोनों और अधिकांशत: हम रेडियो के माध्यम से ही स्थापित किया गया।

इस दौरान, हजारा क्षेत्रों में तथा दारूलामन महल की सड़क पर इत्तिहाद और बहदात सेनाओं के बीच हुए भीषण संघर्ष के परिणामस्वरूप शहर के भीतर असुरक्षा की स्थिति उत्पन्न हो गई जिसके कारण महल को भारी क्षति पहुंची तथा निकटवर्ती राष्ट्रीय संग्रहालय को भी काफी नुकसान हुआ जिसमें अनेक अमूल्य ऐतिहासिक विमानों, दुलर्भ वस्तुओं और संग्रह की गई चीजों को या तो लूट लिया गया अथवा क्षतिग्रस्त कर दिया गया। मैंने भी अपने कुछ संयुक्त राष्ट्र के मित्रों के साथ समीपवर्ती जम्हुरियत अस्पताल का दौरा किया जिस पर बमबारी की गई थी तथा दोनों ओर से होने वाली गोलीबारी में फंसे नागरिकों, जिनमें पुरुष, महिलाएं और बच्चे शामिल थे, की दयनीय स्थिति का अवलोकन किया। वहां का दृश्य ताजे रक्त और जमे हुए रक्त, कटे पड़े हाथ-पैरों तथा क्षत-विक्षत शरीर के अंगों से पटा हुआ था। अगले कुछ दिनों के दौरान, हम निरंतर होने वाली बमबारी के फलस्वरूप राजधानी से नागरिकों को तेजी से बाहर निकालने की प्रक्रिया के बारे में सचेत हो गए। मुझे राजदूत ऑस्ट्रोवेंकों द्वारा रूसी मिशन की सुरक्षा पर बढ़ने वाले खतरे के बारे में सूचित किया गया, जो शहर के उस भाग में स्थित कुछ राजनयिक मिशनों में से एक था। जैसे-जैसे सामान्य तौर पर राजनयिक लोगों की शारीरिक सुरक्षा के लिए चिंताओं में वृद्धि होने लगी, मैंने विदेश कार्यालय का ध्यान अन्य मिशनों के कार्मिकों के साथ-साथ रूस के सैकड़ों राजनयिक कार्मिकों को वहां से बाहर निकालने की प्रक्रिया को व्यवस्थित ढंग से क्रियान्वित करने का कोई तरीका निकालने की ओर आकर्षित किया। पश्चिमी मिशनों, जैसे फ्रांस और इटली तथ पोलैंड और बुलगेरिया, में से अधिकांश में कर्मियों की संख्या एक तक हो गई थी। ईरान और पाकिस्तान इन चर्चाओं से बाहर रहे तथा वे फिर अपने कार्मिकों में वृद्धि ही कर रहे थे। परंतु चीन, तुर्की, भारत और इंडोनेशिया जैसे मिशन तथा संयुक्त राष्ट्र के कार्मिक भी अपनी संख्या को और कम करने की आवश्यकता महसूस कर रहे थे। ऐसा बमबारी को रोकने के लिए किसी सहमति के अभाव में संभव नहीं था जिससे कि वहां से निष्कासन को सुगम बनाया जाता। परंतु सरकार तथा दक्षिण के इसके कठोर नियंत्रकों के बीच किसी भी प्रकार की समझ विकसित होने की संभावना कम ही थी। फिर भी, मुझे पाकिस्तान के राजदूत अमीर ओस्मान की मध्यस्था के माध्यम से मंत्रालय से हवाई-अड्डे के क्षेत्र पर बमबारी न किए जाने की निश्चित अवधि के बारे में आश्वासन प्राप्त हो ही गया जिसके दौरान हम शेष रह गए राजनयिक

कार्मिकों को काबुल से निकालने की व्यवस्था कर सकते थे। यह प्रक्रिया 28 अगस्त की सुबह 5 बजे से 9 बजे तक सहमत की गई थी। जबकि किसी राजदूत ओस्ट्रावेंकों ने पश्चिमी काबुल से हवाई-अड्डा क्षेत्र के लिए अपने स्वयं के कार्मिकों को ले जाने के लिए व्यापक संभार-तंत्र का प्रयोग किया था, मुझे स्मरण है कि मैंने पोलैंड, बुल्गारिया, इंडोनेशिया, चीन और भारत के लगभग तीस कनिष्ठ कर्मचारियों और उनके परिवार के सदस्यों को एकत्र किया था तथा उन्हें एक रात पहले भारतीय निवास में ले जाया गया था। वहां पर, नियमित रूप से की जाने वाली बिजली की कटौती के दौरान छोटे होंडा जेनरेटरों में दस से कुछ अधिक महिलाओं को ड्राइंग रूप में गद्दों पर सुलाया गया। अगली सुबह उन्हें जल्दी उठाकर, तेजी से तैयार कराते हुए हवाई-अड्डे की ओर प्रस्थान करने के लिए समुचित व्यवस्था की गई। जब हम हवाई-अड्डे पहुंचे, तो हमने पाया कि हमें वहां से निकालने तथा दशान्वबे तक ले जाने के लिए नियत किए गए तीन विमानों में से एक विमान पहले ही वहां पहुंच चुका था तथा उसमें रूस के कर्मचारी अपना सामान रख रहे थे। हमारे कुछ यूरोपीय साथी भी उस पहले विमान में उनके साथ शामिल हो गए। जब विमान ने अपने यात्रियों को सवार कर लिया तो वह उड़ान भरने के लिए हवाई-पट्टी के किनारे तक पहुंच गया और तभी दूसरा विमान हवाई-पट्टी पर उतरा तथा टर्मिनल के किनारे खड़ा हो गया। कुछ एशियाई राजनयिकों और उनके कर्मचारियों को पहले से ही तीसरे विमान में यात्रियों के रूप में निर्धारित किया गया था। तथापि, रूसी बसों के वहां पहुंचने में होने वाली देरी को ध्यान में रखते हुए अंतिम क्षणों पर, हमारे लोगों को उस विमान में चढ़ने के लिए कहा गया जिनकी संख्या लगभग पच्चीस थी। विमान की उड़ान की समान प्रक्रिया का पालन करते हुए, यह विमान हवाई-पट्टी के किनारे पर पहुंच गया तथा तीसरे विमान के उतरने की प्रतीक्षा करने लगा। तभी हवाई-अड्डे के विभिन्न भागों में गहन रॉकेट आक्रमण प्रारंभ हो गया। पहले-पहल हमने इसे गंभीरता से नहीं लिया और यह सोचा कि वे केवल खाली खोल ही होंगे जो हवाई-अड्डे के इस भाग में संयोगवश गिर गए होंगे। शीघ्र ही यह स्पष्ट हो गया कि हवाई-अड्डे पर आक्रमण किया जा रहा है तथा रूसी विमान को निशाना बनाया जा रहा है। तीसरे विमान के उतरने की प्रतीक्षा करने वाला विमान धीरे-धीरे कम-से-कम रनवे का प्रयोग करते हुए उड़ान के लिए चलने लगा। इसी दौरान, तीसरा विमान भी टर्मिनल की ओर उतरने लगा और टर्मिनल की ओर जाने लगा। तभी उसके अग्रिम भाग पर रॉकेट द्वारा हमला किया गया जिससे उसमें आग लग गई। यह भी प्रतीत हुआ कि विमान को संचालित करने वाले एक पायलट को भी चोट आई थी। बेहतर सूझ-बूझ दर्शाते हुए, विमान को पीछे की ओर ले जाया गया तथा क्षतिग्रस्त विमान ने तत्काल ही उड़ान भरने वाले विमान को रेडियो द्वारा संदेश प्रेषित किया और उससे हवाई-पट्टी में वापस लौटने के लिए कहा जिससे चोटग्रस्त विमान कर्मियों को राहत-सहायता प्रदान की जा सके। बमबारी के दौरान, मुझे स्मरण है कि हम वापस रनवे के मध्य में खड़े थे और इन घटनाओं को देख रहे थे। दूसरा विमान रनवे पर लौट गया था, और जैसे यह रनवे पर खड़ा हुआ, रूसी टुकड़ियों के युद्ध जवानों ने घायल विमानकर्मियों को वस्तुत: उस विमान में धकेल भर दिया गया। इसके बाद उसने उड़ान भर ली। अब तक तीसरे विमान के अग्रभाग ने, जिसे उसके कर्मीदलों द्वारा छोड़ दिया गया था, पूरी तरह से आग पकड़ ली थी और वह धधक कर जलने लगा था। यह काबुल हवाई-अड्डे पर वर्षों तक आधा जला पड़ा रहा जो उस दिन की भयावहता की याद दिलाता रहा।

इन घटनाओं के कुछ दिन पश्चात् अगस्त माह की समाप्ति पर, राष्ट्रपति रब्बानी ने दिल्ली की संक्षिप्त यात्रा की तथा उन्होंने भारत के साथ सामान्य संबंध विकसित करने की नई मुजाहिद्दीन सरकार के आशय को दोहराया। उन्होंने भारत द्वारा अफगानिस्तान को प्रदान की जा रही पारंपरिक सहायता को जारी रखने का आग्रह भी किया। अपनी ओर से, नरसिंह राव सरकार ने काबुल के साथ सामान्य संबंध बनाए रखने की आवश्यकता का यथार्थवादी आकलन किया, ताकि इस देश में हमारी समग्र सहायता को पाकिस्तान के वहां बढ़ते हुए प्रभाव को ध्यान में रखते हुए न्यूनतम रूप से संरक्षित किया जा सके। तथापि, वास्तविकता यह थी कि नज़ीब सरकार के पतन के कुछ माह उपरांत पाकिस्तान इस बात का गलत आरोप लगाते हुए कि भारत ने सोवियत हस्तक्षेप का समर्थन किया है, कि यह काबुल में स्थापित किए जा रहे इस्लामी राज्य के विरोध में है, वह अफगान संकट पर आयोजित की जाने वाली संयुक्त राष्ट्र पड़ोसी नहीं है, प्रायोजित बैठकों में और क्रमिक अन्य प्रादेशिक बैठकों में भारत को बाहर रखने में सफल रहा और यह भी दावा किया कि चूंकि यह अफगानिस्तान का प्रत्यक्ष पड़ोसी नहीं है, भारत को वहां की स्थिति पर कोई दावा नहीं है। पठानी जनजातीय नेतृत्व के साथ संबंधों को पुन:स्थापित करने के हमारे प्रयास भी निरंतर कठिन होते जा रहे थे। हालांकि भारत में नजीबुल्ला के परिवार की उपस्थिति तथा उन्हें निरंतर सहायता जारी रखने की सरकार की बिना शर्त पेशकश पठानी परंपराओं को कायम रखने में पूर्णत: औचित्यसम्मत प्रतीत होती थीं, इसका उस समय तक हमारे साथ संबंध स्थापित करने में अन्य नेताओं को प्रतिष्ठित करने का व्यावहारिक और अप्रत्यक्ष प्रभार पड़ रहा था, जब तक कि नजीब एक संभावित राजनीतिक ताकत बने रहते, भले ही वे काबुल में संयुक्त राष्ट्र के परिसर में प्रतिबंधित थे। इसके परिणामस्वरूप, इस्लामी जिहाद परिषद के कार्यों में आईएसआई के पर्याप्त हस्तक्षेप और सामान्यत: उन पर पड़ने वाले प्रभाव के विरुद्ध कुछ मुजाहिद्दीन नेताओं के मध्य स्पष्टत: असंतोष व्याप्त था जो विशेष रूप से जुंबिश-ए-मिली और शूरा-ए-नजर के भीतर विद्यमान अवयवों द्वारा पर्याप्तत: महसूस किया जा रहा था। अत: इस बात में आश्चर्य नहीं था कि सितम्बर में, दोस्तम के अनुरोध पर तथा जरिएत सरकार के अनुमोदन के साथ, विदेश मंत्रालय ने काबुल के स्थान पर अजार-ए-शरीफ में राजदूत हामिद अंसारी के नेतृत्व में एक विशेष मिशन भेजने की उपयोगिता को महसूस किया। इस मिशन के साथ पर्याप्त मात्रा में मानवीय सहायता भी प्रेषित की गई थी जिसमें सरकार और उत्तर में उसके सहयोगी संगठनों के प्रयोग के लिए दवाइयां तथा चिकित्सा आपूर्ति शामिल थी। मुझे अंतिम समय में इस मिशन के आगमन के बारे में सूचित किया गया था तथा मैं काबुल के सैन्य कमांडर की सहायता से माजर तक पहुंचने में समर्थ रहा और वहां उसके अल्प प्रवास के दौरान उपस्थित रहा। दोस्तम के साथ बैठक अत्यंत सौहार्दपूर्ण और व्यापारिक बैठक की ही भांति थी तथा यह स्पष्ट था कि नए नेतृत्व , विशेष रूप से उत्तर के नेतृत्व ने यह महसूस करना आरंभ कर दिया था कि काबुल पर नियंत्रण के लिए प्रयास और देश में हर तरफ जारी नागरिक युद्ध पठानों और गैर-पठानों के बीच नृजातीय विरोधाभास की चिर-परिचित आकृति ले रहा था जो अत्यंत निर्दयता के साथ लड़ी जाने वाली और लंबे समय तक चलने वाली लड़ाई होगी। भारत के लिए, जिसके दक्षिण अफगानिस्तान की पठान जनजातियों के साथ पारंपरिक संबंध थे, यह होबसन के लिए विशिष्ट विकल्प प्रस्तुत करने का अवसर था। दिल्ली को अब गैर-पठानों जैसे मसूद और दोस्तम की ओर

पठानी बाधाओं के लिए नए विकल्प तैयार करने क लिए विवश किया जा रहा था। मुझे राजदूत अंसारी के साथ भारतीय वायुसेना के विमान पर अपनी वापसी की यात्रा का स्मरण है जिसमें दोस्तम द्वारा उपहार में दिए गए सैकड़ों विंटर मेलन लदे हुए थे जिसमें विमान के पिछले भाग पर ही छोड़ना पड़ा था तथा जिनके बारे में हमारा मानना था कि उन्होंने अफगानिस्तान में अभियान को सुरक्षित रूप से संचालित करने के लिए दिल्ली में वायु सेना स्टेशन के प्रति हमारे सामूहिक उपहार के रूप में कार्य किया होगा।

एक सप्ताह के भीतर, मैं इस क्षत-विक्षत परंतु अत्यंत सुंदर शहर में अपने कार्यकाल का अंतिम माह पूर्ण करने के लिए शहर की ओर लौटने के लिए काबुल हवाई-अड्डे में सुरक्षा की स्थिति में हुए अस्थायी सुधार से लाभान्वित हुआ। दिल्ली में रहते हुए, मैं नजीब द्वारा उनके परिवार को भेजे गए कुछ संदेशों और पत्रों को संप्रेषित करने में सफल रहा। संयुक्त राष्ट्र परिसर में उन्हें निरुद्ध किए जाने की अवधि के दौरान, उनसे मुलाकात करने के लिए मेरे अवसर विभिन्न कारणों से और अधिक कठिन होते चले गए। तथापि, विभिन्न अप्रत्यक्ष तरीकों के माध्यम से, जिनमें कुछ पूर्व केएचएडी साथियों के प्रयोग से, जो अब मुजाहिद्दीन सरकार में शामिल हो गए थे और नए विदेश मंत्रालय में नयाचार विभाग में भी विद्यमान थे, मुझे नजीब द्वारा अपने परिवार को लिखे गए गोपनीय संदेश और पत्र भेजे गए, जिन्हें मैं दिल्ली भेजने में सफल रहा। इस दौरान, हमारा मिशन नागर विमानन मंत्री डा. अब्दुल रहमान तथा विदेश मंत्रालय में राज्य मंत्री नजीबुल्ला लाफेरी के साथ सुदृढ़ संबंध बना पाने में सफल रहा जिससे हमें अच्छे परिणाम उपलब्ध कराए। दोस्तम को दवाइयों की आपूर्ति करने के उपरांत, आईजीआईसीएच के लिए आपूर्तियों और उपकरणों की उपलब्धता कराने के लिए भी समान अनुरोध किया गया, हालांकि इस बात की रिपोर्टें प्राप्त हो रही थीं कि इसका नाम बदलकर काबुल बाल स्वास्थ्य संस्थान किए जाने की संभावना है। इस दौरान, शहर भी स्वयं विभिन्न मुजाहिद्दीन धड़ों में विभाजित हो गया था तथा शहर के एक भाग से दूसरे भाग की ओर जाना अत्यंत कठिन होता जा रहा था। सबसे असुरक्षित स्थान शहर के पश्चिमी भाग थे क्योंकि वाहदत और इत्तिहाद ने हाल ही में खूनी संघर्ष हुए थे। मध्य काबुल के हमारे भाग में भी, सामान्य कानून और व्यवस्था की स्थिति स्थिर थी, लेकिन जमिएत और जौजजनी लड़ाकों के अंतर्गत सरकारी सेनाओं के बीच, जौजजनी स्व-अनुशासन का प्रतीत नहीं थे तथा उन्हें वाहनों को जब्त करने ओर छोटी-मोटी चोरियां करने के यादृच्छिक मामलों में शामिल माना जाता था जिससे स्थानीय जनता को परेशानियां होती थी। तथापि, वास्तविक उत्पीड़न और शारीरिक हमलों के कुछ मामले भी होते थे, जिनमें विदेशी अथवा राजनयिक शामिल रहते थे, चिंता का एक अन्य विषय यह तथ्य था कि हमारे पास भारतीय निवास के परिसर में भारतीय मिशन के अनन्य प्रयोग के लिए एक पेट्रोल और डीजल पंपिंग स्टेशन था, जिस पर शहर में घूमने वाले अनेक सशस्त्र समूहों की नजर थी तथा वे इसकी बहुमूल्य संपत्ति को लूटना चाहते थे। परंतु हालांकि लड़ाकों के इन सक्रिय समूहों को विश्राम और आराम के आकस्मिक क्षण चाहिए होते थे, विशेष रूप से साप्ताहांत के दौरान रात्रि के समय, हम प्राय: मध्य काबुल के आसमान में जश्न के रूप में छोड़ी जाने वाली गोलियों की चिंगारियों को देखा करते थे जो विभिन्न रोशनियों, रंग और आवाज उत्पन्न करती थीं। हालांकि, प्रारंभ में हमें यह ज्ञात नहीं हो पाता था कि क्या वह हमलों की एक नई कड़ी है, परंतु शीघ्र ही हमने

इन जश्नों पर छोड़ी जाने वाली गोलियों की बौछारों और आक्रमण की स्थिति की पहचान करना सीख लिया था, जो उनकी मारक क्षमता से पहचानी जाती थीं।

अक्तूबर, 1992 की समाप्ति तक, मैं काबुल छोड़ने के लिए तैयार हो गया था तथा मैंने राष्ट्रपति रब्बानी और विदेश मंत्री को अपनी अंतिम विदाई के कॉल किए और बदले में विदेश मंत्री सलमान गेलानी की ओर से एक शानदार विदाई रात्रि-भोज भी प्राप्त किया। दोनों ही पक्षों की ओर से सामान्य शिष्टाचार का प्रयोग किया गया, विशेष रूप से अफगान पक्ष की ओर से, हमारे दोनों देशों के बीच संबंधों पर पर्याप्त रूप से सराहना और प्रशंसा भरे शब्दों की बौछार की गई। परंतु मेरे नजरिए से जो बात वस्तुत: मन को छू लेने वाली थी, वह अपने मित्रों और सहयोगियों से बिछड़ने का व्यक्तिगत दु:ख था जिनके साथ हमने राजधानी में अपने प्रवास के पूर्ववर्ती माहों के दौरान प्रगाढ़ संबंध विकसित कर दिए थे। ऐसा ही एक सहयोगी एक दर्जी था, जिसे मैं शहर में लड़ाई प्रारंभ होने से पूर्व दो महीनों से जानता था। नब्बे वर्ष के इस वयोवृद्ध का नाम खलीफा मोहम्मद हसन था जिसकी शाहरे नौथार में सिलाई की दुकान थी जो शहर में अप्रैल की लड़ाई में नष्ट हो गई थी जिसमें उसके इकलौते पुत्र की मृत्यु भी हो गई थी। अपनी दुकान को बंद करके यह वृद्ध व्यक्ति उत्तरी इलाके में चला गया था और मेरे प्रस्थान से पूर्व मैंने अत्यंत कठिनाई के साथ उसकी दुकान का पता लगाया था जिसमें हमारे भाषांतरणकार कुरैशी ने काफी सहायता की थी। काबुल से हमारे प्रस्थान से एक दिन पूर्व मैं विभिन्न धड़ों द्वारा नियंत्रित क्षेत्रों को पार करते हुए तथा उनके साथ सुलभ मार्ग प्रदान करने के लिए पहले से ही बातचीत करने के माध्यम से उसके घर पर पहुंचने में समर्थ रहा। जब मैं उसके परिसर में पहुंचा, तो उसने घर के बाहर मेरा स्वागत किया और मुझे घर के निम्नतल पर ले गया, जहां उसने मेरे और भारत के प्रति अपने सम्मान के विषय में उल्लेख किया और उसी सम्मान के प्रदर्शन के तौर पर मेरे सामने चाय, ताजे फल और मेवों का अंबार लगा दिया। उसने कहा कि उसे पता चला है कि मैं वहां से जाने वाला हूं क्योंकि उसे पिछली शाम को टेलीविजन पर राष्ट्रपति रबनी के साथ मेरी विदाई बैठक को देखा था। उसने तब साधारण और प्रत्यक्ष तरीके से कहा : "आपका मुझसे आज मिलने आना, राष्ट्रपति के साथ आपकी बैठक से अधिक महत्वपूर्ण है।" यह देखकर के उनके इस वक्तव्य से मुझे हैरानी हुई है, उसने कुछ देर रुककर यह बताया कि "एक राजदूत के रूप में, आपने यहां से प्रस्थान करने से पूर्व राष्ट्रपति के साथ मुलाकात की। आपका मुझे मिलने आना तो बनता ही नहीं था। फिर भी, आप यहां आए। अत: मेरे साथ आपकी यह मुलाकात अधिक महत्वपूर्ण है।" उसके वक्तव्य इस ईमानदार और आत्मामयी सरलता को सुनकर मेरी आंखों में आंसू छलक आए

उपसंहार

मैंने काबुल में इत्तिहाद-वाहदात विरोध को उसके भीषणतम चरण तक पहुंचने से पूर्व अक्तूबर, 1992 के अंत में काबुल छोड़ दिया। अप्रैल के घटनाक्रमों में अफगान राज्य संरचना के प्राधिकार और वैधता को इस तरीके से समाप्त करने का प्रभाव था जिसकी भरपाई आज तक भी नहीं की जा सकी है। जैसी कि किसी विद्वान द्वारा टिप्पणी की गई है, "एक अंतर्वती राज्य बनने के साथ-साथ

अफगानिस्तान एक उभरती हुई अवैध अर्थव्यवस्था के लिए 'विपणन गलियारा' बन गया।[5]" पठानों और गैर-पठानों के बीच का अंतर, पिछले वर्षों में कम होने के स्थान पर अत्यंत बढ़ गया था। उन समृद्धों के लिए जो लगभग इसकी स्थापना के समय से ही मुख्यत: किरायों और बाहरी अनुदानों के माध्यम से पारंपरिक दृष्टि से फले-फूले थे, अफगानिस्तान के नेताओं ने शासन की स्थित संस्थाओं अथवा विधि के शासन को विकसित में अत्यंत कम रुचि दर्शाई अथवा उनकी यह करने की क्षमता ही नहीं थी। इन व्यवस्थाओं के सुदृढ़ होने के लिए देश को ईरानी 'बाजारी' मध्यम वर्ग के समकक्ष स्वदेशी समुदाय अथवा प्रवासी-चालित उद्यमशील समुदाय विकसित करना होगा जो देश में अवसंरचना और सेवाओं के बाह्य चालित निवेश को पुन: प्रवर्तित कर सके। परंतु ऐसा होने के लिए, यह महत्वपूर्ण है कि जिहादी दृष्टिकोण को राष्ट्रीय प्रयोजन की भावना द्वारा प्रतिस्थापित किया जाए जो विभिन्न मूल्यों में प्रतिबिंबित होती हो जैसे गरीबी उपशमन, शिक्षा और कौाल विकास, छोटे व्यवसायों और व्यापारों का पुनरूद्धार और साथ इसके अफीम-पूर्व अतीत की कृषि और खनन संबंधी आजीविका प्रक्रियाएं। वर्तमान सरकार के प्रयासों के बावजूद, विशेष रूप से उसकी उप-राष्ट्रीय शासन पहलों के मद्देनजर इस बात में अभी कुछ समय लगेगा इससे पूर्व कि ये लक्ष्य और मूल्य इसके लोगों के मध्य वास्तविक रूप से आत्मसात हो पाएं।

******

[5] देखिए जॉनाथन गुड हैंड : फ्रंटियर्स एंड वार्स : दि ओपियम इकानॉमी इन अफगानिस्तान। जर्नल ऑफ एग्रेरियन चेंज : खंड 5 सं. 2 अप्रैल, 2008. पृ. 191-216.